शिवा-बावनी



टीकाकार—

पं० राजनारायण शर्मा

'हिन्दी-प्रभाकर'

शिवा-बावनी

(सटीक)

जिस में शब्दार्थ, पद्यार्थ, पाठान्तर, अलँकार स्पष्टीकरण, एवं आये हुए छन्दों के लक्षण सब भली-भाँति विस्तार से दिये गये हैं ।

—०:०—

संपादक—
पं० राजनारायण शर्मा
'हिन्दी-प्रभाकर'

हिन्दी-भवन
अनारकली, लाहौर ।

प्रथम बार १००० } सन् १९३४ ई० { मूल्य ।)

प्रकाशक—
नवयुग-साहित्य-मन्दिर,
पोस्ट बक्स ७८,
दिल्ली

मुद्रक—
हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस,
दिल्ली

प्रेस,

शिवा बावनी

प्रस्तावना

—:❖:—

कविराज भूषण कृत शिवाबावनी के अबतक बीसियों भिन्न २ संस्करण छप चुके हैं, किसी में मूल के साथ शब्दार्थ दिये हैं तो किसी में मूल के साथ भावार्थ ही देकर इति कर दी है, मूलपाठों में तो कहीं एक दूसरे में बड़ा ही अंतर मिलता है। भूषणजी की शिवाबावनी के ५२ कवित्तों के अतिरिक्त फुटकर कवित्त एवं सवैये भी मिलते हैं इस कारण किसी-किसी शिवाबावनी में तो फुटकर का कवित्त सम्मिलित कर लिया है किसी में मूल का कवित्त फुटकर में दे दिया है। इन सब बातों को दृष्टि में रखकर हमने यह सोचा कि यदि शिवाबावनी का ऐसा संस्करण निकाला जाय कि जिसमें मूल यथासंभव बिलकुल ठीक हो और मूल की कठिनाई को सरल करने के लिये उसके शब्दार्थ, अर्थ एवं अलंकार भी खूब खोलकर दिये जायँ तो उत्तम है। इसी विचार के आधार पर प्रस्तुत शिवा बावनी टीका सहित सम्पादित की गई है इसमें यत्रतत्र पाठान्तरों के निमित्त सूचना भी दे दी गई हैं जिससे पाठकों को उचित पाठ से परिचय प्राप्त हो। यह शिवाबावनी की टीका हमने सन् १९२४ ई० में भूषण ग्रन्थावली की टीका के साथ तैयार करली थी किन्तु कई घरेलू झंझटों में फंसे रहने के कारण इसे अभी तक प्रकाशित नहीं करा सके। अब इसकी हिन्दी परीक्षार्थियों को आवश्यकता जान इसे प्रकाशित करना उचित समझा है। इसका मूल प्रायः मिश्रबन्धु संपादित भूषण ग्रंथावली की शिवाबावनी के अनुसार ही है। किन्तु एक-दो छंदों में भिन्नता है जो वास्तव में बावनी में गिनने अप्रामाणिक प्रतीत होते हैं जैसे—

छप्पय नं० १

कौन करै बस वस्तु कोन यहिलोक बड़ो अति ?
को साहस को सिन्धु कौन रजलाज धरे मति ?
कोचकवा को सुखद बसै को सकल सुमन महि ?
अष्ट सिद्ध नव निद्धि देत माँगे को सो कहि ?
जग बूझत उत्तर देत इमि, कवि भूषन कविकुल सचिव ।
दच्छिन नरेस सरजा सुभट, साहिनन्द मकरंद सिव ॥

शब्दार्थ—साहस को सिन्धु=साहस का समुद्र, बड़ा साहसी। रज लाज धरै=रज (धूलि, पृथ्वी) की लज्जा रखता है, पृथ्वी की रक्षा करता है। चकवा को सुखद=चक्रवाक पक्षी को (सूर्य समान) सुख दायक। बसै सुमन महि=सुन्दर मनों (या पुष्पों) में बसता है।

नं० ४९ के स्थान पर

सुमन मैं मकरन्द रहत हे साहि नन्द,
मकरन्द सुमन रहत ज्ञान बोध है ।
मानस में हंस बंस रहत हैं तेरे
जस हंस मैं रहत करि मानस विसोध है ॥
भूषन भनत भौंसिला भुवाल भूमि
तेरी करतूति रही अदभुत रस ओध है ।
पानि में जहाज रहे लाज के जहाज
महाराज सिवराज तेरे पानिप पयोध है ॥

भूषन कवि कहते हैं कि सुमन (पुष्प) में मकरन्द (पुष्परस) रहता है, लेकिन आप साहिनन्द मकरन्द (शिवाजी के दादा) में ज्ञान बोध सुमन है।

मानसरोवर में हंसों का समूह रहता है, परन्तु तेरे यश रूपी हंस में मानस (लोगों का मन) ढूंढते रहते हैं। हे भौंसिला राजा ! तेरी करतूति रूप अद्भुत रस राशि में भूमि रहती है। अर्थात् अद्भुत कार्यों के समूह में भूमण्डल के निवासी रहते हैं। पानी में जहाज रहता है लेकिन आपके लाजरूप जहाज में पानिप (शरीर की आब) का समुद्र है।

उक्त दोनों छंदों के अतिरिक्त सब छंद वैसे ही हैं। हमें पूर्णाशा है कि इस टीका से छात्रों को शिवाबावनी के अध्ययन में यथेष्ट सहायता मिलेगी

विद्यार्थीगणों की सरलता के लिये प्रत्येक कवित्त के अलंकारों को भी भलीभाँति खोलकर लिखा गया है जिससे यह टीका सर्वथा उपयोगी हो गई है।

पं० राजनारायण शर्मा
'हिन्दी प्रभाकर'

महाकवि भूषण

वीर-भयानक-रौद्ररस आचारज रतिधाम ।
शिवजस-पंकज मधुप तू भूषण सुकवि ललाम् ॥

परिस्थिति

हिन्दी के प्रसिद्ध महाकवि भूषण के जन्मकाल की परिस्थिति हिन्दू-जाति के लिये बड़ी ही नैराश्यमयी थी। एक ओर तो मुगल साम्राज्य का अंतिम शक्ति-शाली सम्राट् औरंगज़ेब बिखरती हुई राज्यश्री को संग्रहीत करने के लिये हिन्दुओं पर मनमाने अत्याचार कर रहा था, तथा दूसरी ओर उसी के भाई बन्धु धर्मजन्य सब भेद-भावों को मिटाकर विलासिता के क्षेत्र में हिन्दुओं से गाढ़ी मैत्री स्थापित कर रहे थे। जनता की रक्षा के उत्तरदायी हिन्दू-नृपति जहाँ भोग विलास में पड़ अपने चरित्र-पतन की पराकाष्ठा दिखाकर आलस्य और अकर्मण्यता की मूर्ति बने हुए थे, वहाँ जनता भी अत्याचारों से पीड़ित तथा आत्म-रक्षा से निराश होकर हिन्दू-धर्म को त्याग विवश यवनों की संख्या बढ़ा रही थी। लोक-हित के सच्चे सहायक कविगण भी अपने उच्च आशय से गिरकर धन और सन्मान के लिए देश में कामुकता के विषमयवायुमण्डल का सृजन कर रहे थे। ठीक ऐसे ही समय में जाति को आशा का अवलम्बन देने तथा उसे सुमार्ग पर लगाने के लिए महाकवि भूषण का जन्म हुआ।

वंश-परिचय

यद्यपि कुछ पहिले तक भूषण के जन्म-संवत् के विषय में हिन्दी साहित्य के इतिहास-कारों में कुछ मत-भेद चला आता था, किन्तु अब यह

पूर्णरूप से निश्चित होगया है कि इनका जन्म संवत् १६७० बि० में कानपुर जिले के अन्तर्गत त्रिविक्रपुर (वर्तमान तिकवाँपुर) नामक ग्राम में कान्य-कुब्ज ब्राह्मण तथा काश्यप गोत्री पण्डित रत्नाकर त्रिपाठी के घर हुआ। इनके अन्य तीन भाई चिन्तामणी, मतिराम तथा नीलकण्ठ-उपनाम जटाशंकर-थे। इनमें से चिन्तामणी तो हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित आचार्य थे तथा मतिराम जी श्रृंगार रस के प्रसिद्ध कवि तथा रसराज ललित-ललाम आदि विख्यात ग्रंथों के रचयिता थे। हाँ नीलकण्ठ लिखित कोई स्वतंत्र ग्रंथ तो नहीं मिलता किन्तु इनकी भी कुछ फुटकर कविताएँ अवश्य प्राप्त हुई हैं। कहने का अभिप्राय यही है कि काव्य-विद्या के अभ्यास का क्षेत्र इनके घर पहिले से ही वर्तमान था।

ऊपर भूषण के प्रारम्भिक जीवन संबंधी जिस घटना का वर्णन किया गया है उसका आधार वह अपर्याप्त सामग्री है जिसका सन्निवेश उनके समकालीन कवियों ने अपने ग्रन्थों में किया है। इस अवस्था में किसी विस्तृत वर्णन की आशा तो व्यर्थ ही है। और तो क्या स्वयं इनके वास्तविक नाम के विषय में भी निश्चितरूप से कुछ ज्ञात नहीं है। क्योंकि 'भूषण' तो इनका नाम न होकर इनकी पदवी थी, जिसे चित्रकूटाधिपति हृदयराम सुत रुद्रराम ने इनकी कविता से प्रसन्न होकर दी थी। इसकी ओर इन्होंने अपने ग्रन्थ 'शिवराजभूषण' में भी संकेत किया है। यथा—

कुल सुलंकि चित्रकूट-पति, साहस-सील-समुद्र।
कवि भूषण, पदवी दई हृदयराम सुत रुद्र॥

प्रारम्भिक जीवन

जनश्रुति है कि बाल्यकाल में इन्होंने विद्याभ्यास की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया तथा अठारह उन्नीस वर्ष की अवस्था तक खेल कूद

में ही समय व्यतीत करते रहे। कहते हैं कि एक दिन जब ये भोजन करने बैठे तो किसी पदार्थ में नमक कम होने के कारण इन्होंने अपनी भाभी से नमक माँगा। उसने बड़े ताने से कहा कि क्या तुम कमाई करके लाए हो जो नमक दूँ। बस ये बचन इन्हें लग गये और वे घर से निकल पड़े।

घर से निकल कर इन्होंने विद्या का अच्छा अभ्यास किया और कविता बनाने की शक्ति प्राप्त करली। इधर उधर कुछ समय तक देशाटन करने के पश्चात् ये चित्रकूटाधिपति सोलंकी वंशीय महाराज रुद्रराम के दरबार में पहुँचे। यहाँ पर इनका अच्छा आदर सम्मान हुआ तथा महाराज के द्वारा "भूषण" की पदवी मिली। हिंदी साहित्य के कुछ विद्वानों का मत है कि उपरोक्त, दरबार से वे अपने भाई चिंतामणी के साथ औरंगज़ेब के यहाँ गए और कुछ दिन रहे। एक दिन औरंगज़ेब ने इनसे कोई निंदा का पद सुनाने को कहा, इन्होंने क्षमा की प्रतिज्ञा कराकर शिवा-बावनी के नं० १३ और १४ कवित्त सुनाये जिनसे बादशाह बहुत चिढ़ा। अन्त में यह शाही दरबार को छोड़ कर शिवाजी के पास चले गये। हिन्दी नवरत्न के लेखक श्री मिश्रबन्धु इस कथा को ग्राह्य नहीं समझते, जिसके उन्होंने कारण भी दिये हैं।

शिवाजी से भेट

यह सन् १६६७ के अन्त में प्रायः ५४ वर्ष की अवस्था में प्रसिद्ध महाराज शिवाजी के यहाँ गए और अचानक उनसे नगर के बाहर एक शिवालय में इनकी भेंट होगई। इन्होंने शिवाजी को पहचाना तो नहीं, किन्तु उसके कहने पर शिवाजी की वीरता का निम्न लिखित कवित्त सुनाया :—

इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सुअम्भ पर,
रावण सदम्भ पर रघुकुल राज है।

पौन बारिबाह पर, संभु रतिनाह पर,
ज्यों सहसबाह पर राम द्विजराज है ॥
दावा द्रुमदण्ड पर, चीता मृग झुण्ड पर,
भूषण वितुण्ड पर जैसे मृगराज है ।
तेज तम अंस पर, कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलिच्छवंश पर शेर शिवराज है ॥

वह वीर पुरुष इसे सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुआ, किन्तु बार बार आग्रह करने पर भी ये इस कवित्त को केवल १८ बार ही पढ़ सके। तब उस वीर पुरुष ने कहा कि कल तुम दरबार में आना मैं शिवाजी से तुम्हारा साक्षात्कार करा दूँगा। किन्तु दूसरे दिन जब ये दरबार में गए तो उसी पुरुष को सिंहासन पर बैठे देखकर इनके आश्चर्य की सीमा न रही। वह पुरुष शिवाजी ही थे। फिर शिवाजी ने इन्हें १८ गाँव, १८ हाथी तथा १८ लाख रुपया दिया। कुछ विद्वानों का मत है कि भूषण जी ने उस वीर पुरुष को शिवालय के स्थान पर यही एक कवित्त नहीं सुनाया वरन् ५२ कवित्त सुनाये थे जिन से यह शिवा बावनी बनी है और शिवाजी ने इन्हें ५२ हाथी, ५२ लाख रुपये ही दिये। कुछ भी हो भूषण के कवित्त शिवाजी ने अवश्य सुने और इनसे प्रचुर धन मिला। कहते हैं कि भूषण जी ने उसी समय एक नमक का हाथी लदवा कर अपने घर भेज दिया।

कुछ समय तक शिवाजी के दरबार में रहने के उपरान्त ये वहाँ से लौटे। रास्ते में कुछ समय के लिये ये छत्रसाल बुन्देले के यहाँ भी गए तथा उसकी सच्ची प्रशंसा में भी कुछ कवित्त कहे। कहते हैं कि जिस समय ये वहाँ से चलने लगे तो महाराज ने इनके प्रति अपना आदर भाव दिखाने के लिए इनकी पालकी में अपना कंधा लगा दिया। अपने भाई मतिराम के आश्रयदाता राव भाऊसिंह के दरबार में भी इनका जाना

प्रसिद्ध है कुछ समय तक घर रहने के उपरान्त ये फिर शिवाजी के यहाँ गए और बहुत समय तक उनके तथा उनके पुत्र शम्भाजी के दरबार में रहते रहे।

भूषण सच्चे जातीय कवि थे। इनकी कविता का एक मात्र उद्देश्य पतित हिन्दुजाति को उठाना तथा इस कार्य में सहायता करनेवाले वीरों का गुणगान था। शिवराज हिन्दुजाति की रक्षा में संलग्न एक ऐसे ही वीर थे। भूषण ने उन्हें इसीरूप में चित्रित भी किया है—

दशरथजू के राम भे, बसुदेव के गोपाल।
सोई प्रगटे साहि के, श्री सिवराज भुवाल॥

कुछ लोगों ने इनपर झूँठी प्रशंसा के दोषारोपण का प्रयास भी किया है, किन्तु वास्तवमें ऐसी बात नहीं है। भूषण ने तो केवल इस प्रशंसा को ही कविता का स्वरूप दिया है जो शिवराज के कृत्योंद्वारा जनता के बीच फैली हुई थी। जिसने "राखी हिन्दुवानी हिन्दुवान को तिलक राख्यौ, अस्मृति पुरान राखे वेद विधि सुनी में।" तथा "हिन्दुन की चोटी रोटी राखी है"—आदि कार्यों के कर्ता के गुणगान ने उसे कर्ममार्ग में और भी आगे बढ़ाया है ऐसे सच्चे जातीय कवि को खुशामदी कहना केवल किसी बिकट खोपड़ी की ही उपज है।

भूषण पर कुछ राष्ट्रीयता के भक्त मुसलमानों की निन्दा का दोष भी लगाते हैं। परन्तु यदि देखा जाय तो वास्तव में ऐसी बात नहीं है। उसने जहाँ अकबर आदि उदार यवन नृपतियों की प्रशंसा की है 'और पातसाहन के हुती चाह हिन्दुन की, अकबर साहजहाँ कहैं साखि तबकी।' वहाँ केवल यवनों के अत्याचारों पर ही दृष्टिपात किया है। अत्याचार पर घृणा और रोष करना मनुष्यता का आग्रह है। इस क्षेत्र में हिन्दू-मुसलमानों का कोई भी मत भेद नहीं होसकता।

भूषण की कविता बड़ी ही ओजस्विनी, समय विशेषकी परिस्थिति को परखती हुई एवं वीरोल्लासिनी है। बादविवाद के फेर में पड़कर चाहे हम 'चंद' को हिन्दी में वीररस का सर्वोत्कृष्ट लेखक मानलें किन्तु उसके पश्चात इन्हीं महानुभाव का नाम आता है।

भाषा के विषय में भूषण के काव्यों में कुछ अव्यवस्था मिलती है। जिसके कई कारण हैं। सर्वप्रथम तो भाषा में ओज लाने के लिए वीरगाथा काल के प्राचीन कवियों की भाँति इन्हें शब्दों में व्यर्थ का द्वित्व तथा रूपविपर्य्यय करना पड़ा है, तथा दूसरे बृज एवं अवधी के भिन्न २ रूपों का अवाञ्छित समिश्रण होगया है। किन्तु फिर भी यह मानकर की काव्य का लक्ष्य भावोद्दीपन ही होता है, भाषा तो एक साधन मात्र होती है ये क्षम्य जान पड़ते हैं।

भूषण ने शिवराज भूषण, शिवाबावनी, छत्रशालदसक, भूषण उल्लास, भूषण हजारा आदि कितने ही ग्रन्थों की रचना की, किन्तु इनमें से प्रथम तीन की जनता के बीच अधिक ख्याति है। इनकी मृत्यु संवत् १७७२ के आसपास हुई।

छत्रपति शिवाजी

जीती, जाती हुई जिन्होंने भारत-बाजी ।
है जग जाहिर वही छत्रपति भूप शिवाजी ॥

मरहठों की परिस्थिति

सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ से ही दक्षिण भारत में मराठों का इतिहास पूर्ण रूप से मिलने लगता है यह, राजनैतिक कार्यों में बड़े कुशल हुआ करते थे। दक्षिण में उस समय गोलकुण्डा, बीजापुर, अहमदनगर तथा मुग़लों के राज्य थे, ये सब मुसलमानी रियासतें थीं । मुसलमान योद्धा लड़ना अच्छा जानते थे, किन्तु राजनैतिक विषयों में कोरे थे। इस लिए मुसलमानी राज्य का काम बहुत अंशों में मराठे ही चलाया करते थे। बीजापुर और गोलकुण्डा में मराठे ऊंचे ऊंचे पदों पर नियुक्त थे। धीरे २ मराठे राज्यकार्य के अतिरिक्त सेना में भी घुसने लगे और सेनापति तथा मंत्रीपद तक प्राप्त करने लगे !

वंश-परिचय

इस समय दक्षिण में मराठों के आठ वंश मुख्य थे। इन में सर्व श्रेष्ठ सिंहगढ़ का यादव वंश था, जो बरार राज्य के अधीन काम करता था। दूसरा भौंसला वंश था, यह अहमदनगर के राज्य की बागडोर अपने हाथ में लिये हुए था। कहा जाता है कि इस (भौंसला) वंश का पूर्वज करण खेल नामक महापुरुष मेवाड़ के शीशोदिया वंश का था, जो

वहाँ से किसी कारणवश अपनी जन्मभूमि मेवाड़ को त्यागकर दक्षिण में दौलताबाद के निकटस्थ बेरूला नामक ग्राम के (भौंसले) दुर्ग में जाबसा तभी से यह वंश भौंसला कहलाने लगा। इस वंश में सन् १५३१ में सम्भाजी का जन्म हुआ। इनके दो पुत्र हुये मल्लजी और वीरोजी। मल्ल जी का जन्म सन् १५५२ ई. में हुआ था। इनका विवाह बाल्य अवस्था में ही फुलटन के प्रधान बंगजी की भगिनी दीपाबाई से हुआ जिससे इनके दो पुत्र हुए—शाहजी और शरीफ़जी।

शाहजी का विवाह अहमद-नगर रियासत के सब से बड़े मराठे सर्दार लुकजी यादवराव की कन्या जीजीबाई के साथ सन् १६०४ ई. में हुआ। इस समय दिल्ली के तख्त पर अकबर बादशाह विराजमान थे। उन्हों ने अहमदनगर पर आक्रमण किया और नवाब को बन्दी कर अहमदनगर पर अपना अधिकार जमालिया। नवाब के वंशवालोंने कुछ दिनों बाद मुग़लों के विरूद्ध लड़ाई छेड़दी। मल्लजीने जो उस समय भाग्य से अच्छे शक्तिशाली होगये थे उनकी बहुत मदद की जिससे अहमदनगर का बहुतसा अंश वापस लौट आया। अहमदनगर के नवाबने मल्लजी की सहायता के एवज में मल्लजी को चाकन और शिवनेर का दुर्ग तथा पूना और सूया ये दो गाँव दिये। इस के अतिरिक्त उन्हें 'खुमान राजा' की उपाधि भी दी। मल्लजी का स्वर्गवास १६२० ई. में हुआ। पिता के स्वर्गवासी होने पर शाहजी अहमदनगर की पहिले की भाँति ही बराबर सहायता करते रहे। सन् १६२० ई. में शाहजहांने जब आक्रमण किया तब अहमदनगर की शाहजी और इनके स्वसुर यादव राव ने मदद की, किन्तु मुगलों की विजय हुई। यादव राव मुगलों की ओर मिल गया। इस प्रकार शाहजी अहमदनगर की ओर से और यादव राव मुग़लों की ओर से आपस में लड़ते रहे। एक बार युद्ध में शाहजी

को परास्त होकर भागना पड़ा। उस समय शाहजी की स्त्री जीजीबाई पीछे रह गई और अपने शत्रु पिता यादवराव के हाथ पड़ी।

शिवाजी का जन्म

पिताने जीजीबाई के साथ शत्रु का-सा ही व्यवहार किया और उसे शिवनेर के क़िले में बन्दी कर दिया। जीजीबाई इस समय गर्भवती थीं। इन्होंने शिवनेर के क़िले की शिवादेवी की खूब पूजा की और वहाँ कारागार में दो महीने वास करने के बाद सन् १६२७ ई. में इनके गर्भ से एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुवा। जीजीबाईने बालक को शिवादेवी का प्रसाद समझकर उस का नाम 'शिवाजी' रक्खा।

बन्धन मुक्त

कुछ दिन पश्चात् जीजीबाई अपने कुछ स्वामिभक्त सेवकों की सहायता से शिवनेर दुर्ग से मुक्त होकर पूना की जागीर में चली गई और वहाँ सुरक्षित रूप से रहने लगीं। शाहजी के पास पूना की जागीर के अतिरिक्त तंजोर में और जागीर थी वह वहाँ एक दूसरा विवाह करके रहने लगे इस दूसरी स्त्री से शाहजी के वंकोजी नाम का पुत्र हुआ।

पालन-पोषण एवं शिक्षा

इस पूना की जागीर की देखभाल शाहजी की ओर से दादा कोणदेवजी करते थे यह बड़े सज्जन और दूरदर्शी महानुभाव ब्राह्मण थे। इन्होंने शिवाजी की देखभाल बड़ी सावधानी से की। बाल्यकाल से ही शिवाजी की रुचि वीरोचित कार्यों में देखकर दादा कोणदेवने इन्हें शस्त्रास्त्र की शिक्षा पूर्ण रूप से दिलाई। छोटी सी अवस्था में ही शिवाजी एक अच्छे घुड़सवार एवं शस्त्रास्त्र संचालन में परम कुशल हो गये। शिवाजी का

भी पढ़ने लिखने में कम लगता था इसी कारण ये अधिक नहीं पढ़ सके। इनकी माता जीजीबाई ने इन्हें महाभारत और रामायण की वीर रसपूर्ण कहानियाँ सुना-सुनाकर इनके हृदय में हिंदू धर्म के प्रति पूर्णश्रद्धा तथा गो-ब्राह्मण की हित चिन्ता के स्थाई भाव उत्पन्न कर दिये थे। जन्म लेने के समय से ही मुसलमानों के अत्याचारों से पीड़ित होने के कारण बालक शिवाजी को अत्याचारी मुसलमानों से घृणा हो गई थी। अतः यह जब कुछ सँभले तो मातृभूमि को मुसलमानों से स्वतंत्र करने के विचार से एक स्वतंत्र हिन्दू राज्य स्थापित करने की इन्हें धुन सूझी। यह कुछ अपने साथियों को लेकर आसपास के पहाड़ी स्थानों में घूमा करते थे और यहां के दुर्गम स्थानों से भलीभांति परिचित होगये।

उनका विवाह निम्बालकर की पुत्री सुईबाई से हो गया। दादा कोणदेवजी की आज्ञा से ये जागीर का काम भी करने लगे।

आरम्भिक विजय

दक्षिण में उस समय एक मावली जाति रहती थी, ये लोग उस समय बिलकुल असभ्य थे। किन्तु इस जाति के लोग वीर और सच्चे होते थे। अतः शिवाजी ने शीघ्र ही इन्हें अपनाया और कुछ दिनों में ही एक छोटी सी सेना बनाकर आस पास के मुसलमानी क़िलों पर धावा करने लगे इनके इस काल के साथियों में देशमुखबाजी फसलकर, यज्ञजी कंक और तानाजी मूल सरे थे, जिन्होंने जन्मभर शिवाजी का सच्चा साथ दिया। शिवाजी ने सन् १६४६ ई० में तोरण का किला विजय किया। इस दुर्ग के अधिकार के साथ ही शिवाजी के राज्य स्थापन का श्रीगणेश हुआ।

शिवाजी ने इस दुर्ग का जीर्णोद्धार कराके इसका नाम चन्द्रपूर्ण गढ़ रखा। इससे तीन कोस की दूरी पर सन् १६४७ ई० में एक नया विशाल दुर्ग रायगढ़ नाम का और बनवाया।

बीजापुर से अनबन

दादा कोणदेव की इस समय मृत्यु हो चुकी थी। शिवाजी को मृत्यु समय दादाजी ने इस प्रकार के विजय कार्य की अनुमति दे दी थी अतः शिवाजी अब विजय का कार्य दृढ़तापूर्वक करने लगे और शीघ्र ही उन्होंने चाकन, कुंडाने, पुरन्धर तथा कल्याण के दुर्गों को अपने आधीन कर लिया। इस विजयपुर पर शाह बड़े नाराज हुए और शाहजी का इसमें गुप्त हाथ समझ मुहुदल के नायक बाजी घोर पांडे द्वारा शाहजी को कर्नाटक से कैद करा मँगाया। यह बात सुनकर शिवाजीने अपना विजय कार्य कुछ दिन के लिये रोक दिया।

वीजापुर दरबार में एक मुरारपन्त नामक ब्राह्मण मंत्री थे जिनके अनवरत उद्योग से सन् १६५२ ई० में शाहजी कारागार मुक्त हुए। और कर्नाटक में गड़बड़ी होने के कारण वहाँ भेज दिये गये। वहाँ इनके बड़े लड़के सम्भाजी का युद्ध में स्वर्गवास हो गया।

अफ़जलखाँ का बध

शिवाजी ने अब अपने पिता शाहजी के छूटते ही फिर अपना युद्ध कार्य आरम्भ कर दिया, अतः बीजापुर से अफ़जलखां नामक हब्शी सरदार १६५९ ई० में शिवाजी का पूर्णरूप से दमन करने के लिये भेजा। शिवाजी ने जब यह सुना कि अफ़जलखाँ बीजापुर की ओर से पाँच हजार अश्वारोही, सात हजार पैदल तथा कई हजार ऊँट व तोपें लेकर आ रहा है तो इन्होंने अपना अड्डा प्रतापगढ़ में जा लगाया। और सब प्रकार से युद्ध के लिये तैयार हो गये। अफ़जलखाँ मार्ग में देवालयों को नष्ट-भ्रष्ट करता हुआ और हिन्दू बस्तियों में आग लगाता हुआ प्रतापगढ़ के नीचे ही कृष्णा नदी के तट पर आपहुँचा। शिवाजी को खुले मैदान जीतना असंभव समझकर

चालाकी से पकड़ने के लिये गोपीनाथ पन्त द्वारा समझौते के लिये एकान्त में मिलने के लिये बुलाया। शिवाजी ने गोपीनाथ पन्त से सच्चा हाल जानकर एकान्त में मिलना स्वीकार कर लिया और अपनी सेना को सहेट स्थान के चारों ओर घने जंगल में छिपाकर स्वयं गुप्त रूप से युद्धार्थ सुसज्जित होकर अफ़ज़लखाँ से मिले। दोनों के आपस में गले मिलते समय अफ़ज़लखाँ ने शिवाजी पर तलवार की चोट करनी चाही किन्तु शिवाजी ने उसे बचाकर उसके पेट में बघनखा भोंक दिया। यह घटना १० नवम्बर शुक्रवार १६५६ ई० की है। फिर उसी समय अपनी सेना बुलाई और घोर युद्ध शुरु होगया परन्तु स्वामिहीन, मुसलमान सेना ठहर न सकी और ६५ हाथी, ४००० अश्व, १२०० ऊँट और ७ लाख का सोना मिला। बीजापुर सुलतान को बड़ा नुकसान हुआ। १६६१ ई० सुलतान स्वयं लड़ने आये किन्तु शिवाजी से हार जाने के कारण सन्धि करनी पड़ी।

इस सन्धि के अनुसार शिवाजी का अधिकार गोवा से कल्याण तक तथा कोंकण प्रदेश से वर्धातक होगया। सन् १६६२ ई० में शिवाजी ने रायगढ़ को निश्चित रूप से अपनी राजधानी बना लिया।

मुगलों से मुठभेड़

दक्षिण में शिवाजी की इस बढ़ती का समाचार उत्तर भारत में भी जा पहुँचा और मुगल सम्राट औरंगज़ेब को भी शंका होने लगी। अतः उसने सन् १६६३ में मारवाड़ नरेश यशवंतसिंह और शाइस्ताखां को एक बड़ी सेना देकर शिवाजी के दमन के लिए भेजा। इधर शिवाजी ने एक दिन यशवन्तसिंह से व्यक्तिगतरूप से भेंट कर हिन्दु-जाति की रक्षा के लिए उनसे युद्ध से दूर रहने का अनुरोध किया। जब उक्त नरेश ने यह स्वीकार कर लिया तो उन्होंने एक रात को छद्मवेश में अपने कुछ चुने

हुए साथियों की सहायता से शाइस्ताखाँ को मार भगाया। अतः अनायास ही शिवाजी के हाथ पूने का किला आगया।

सूरत की लूट

सन् १६६४ में शिवाजी ने सूरत के अँगरेज़ व्यापारियों को लूटा और उस बन्दरगाह को तहस नहस कर मक्का जानेवाले यात्रियों का मार्ग ही एक प्रकार से बन्द कर दिया।

मुगलों से संधि

अपनी हार से दुःखी होकर क्रुद्ध औरंगज़ेब ने जयपुराधीश मिर्जा राजा जयसिंह को शिवाजी से लड़ने के लिए भेजा*। इधर तो महाराज भी व्यर्थ का रक्तपात नहीं करना चाहते थे और उधर शिवाजी भी आए दिन के युद्धों से तंग आगए थे। अतः उन्होंने कुछ किले देकर औरंगज़ेब से सन्धि कर ली।

औरंगज़ेब से भेंट

इसके पश्चात् शिवाजी को सम्राट के आमन्त्रण पर दरबार में जाना पड़ा। जिस समय शिवाजी पहुँचे तो कहते हैं कि औरंगज़ेब ने किले का फाटक बन्द करवा दिया तथा केवल एक खिड़की खुली रहने दी। शिवाजी बादशाह की इस चाल को समझ गए, अतः सिर झुका कर प्रवेश करने के स्थान में उन्होंने पहले अपने पैर ही अन्दर रक्खे और

---

* इस घटना को लक्ष्य करके ही मिर्जा राजा जयसिंह के प्रसिद्ध दरबारी कवि बिहारीलाल ने यह अन्योक्तिमय दोहा लिखा है—

स्वारथ सुकृत न श्रम वृथा, देख विहंग बिचारि।
बाज पराए पानि परि, तू पंछीहि न मारि॥

तत्पश्चात् प्रवेश कर अभिमान पूर्वक बिना किसी अभिवादनादि के दरबार में चले गए। औरंगज़ेब ने इनका अपमान करने के इरादे से इन्हें पंच-हजारी सर्दारों में स्थान दिया। इस पर तो आत्मसम्मान के अभ्यस्त शिवाजी बिगड़ खड़े हुए और औरंगजेब पर झपटे। इस वार से बचने को कहते हैं कि औरंगजेब स्नानागार में जा छिपा। किन्तु फलस्वरूप उन्हें शीघ्र हो कैद कर लिया गया। यहाँ से शिवाजी ने रुग्ण बनकर किसी युक्ति से आत्म छुटकारा किया और किसी प्रकार कुशलता पूर्वक अपनी राजधानी रायगढ़ में पहुँच गए।

परन्तु औरंगजेब चुप नहीं बैठा। उसने सन् १६७० में दिलेरखाँ और इखलास खाँ के सेनापतित्व में फिर एक सेना भेजी। इस बार मुग़लसेना के साथ बहुत से देशी नरेश भी थे, किन्तु जाति पर मर मिटनेवाले मराठों के समक्ष उनकी एक न चली। सलहेर के मैदान में एक भारी युद्ध हुआ जिसमें मुग़लसेना की ओर के कितने ही वीर काम आए। अन्त में मुग़लों को दुम दबाकर भागना पड़ा। इधर दक्षिण के नवाबों ने भी मुग़लों के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा गाड़ दिया। अतः औरंगजेब को शिवाजी की ओरसे ध्यान हटाकर दूसरी ही ओर दत्तचित होना पड़ा।

राज्याभिषेक

अन्त में शिवाजी ने रायगढ़ में अपना राज्याभिषेक किया। इस अवसर पर कितने ही राज्यों के दूत भी उपस्थित थे। सूरत से अंग्रेज़ एलची भी आया था, तथा शिवाजी ने अंग्रेज़ों को अपने राज्य में निर्द्वन्द व्यापार करने की आज्ञा दी। इसके पश्चात् शिवाजी ने कर्नाटक पर चढ़ाई की जिसका बड़ा ही विशद वर्णन भूषण ने किया है। (देखिये शिवराज भूषण छं० संख्या—४१, ४४, ४५)।

राज्य प्रबन्ध

शिवाजी ने अपने राज्य का प्रबन्ध भी बड़ा ही सुन्दर किया। जनता की सुविधा के लिए उसने स्थान २ पर कुएँ, तालाब तथा प्रशस्त राजपथ बनवाए। स्थान २ पर चौकियाँ स्थापित करवा दी गईं जिनसे यात्रियों को बड़ा ही सुख मिलने लगा। राज्य का सुप्रबन्ध करने के लिए उसने एक 'अष्टप्रधान' नामक संस्था की स्थापना की, जिसके भिन्न २ मंत्री उसे राज्य कार्य में परामर्श दिया करते थे।

स्वर्गारोहण

अन्त में शिवाजी को रोग ने आ घेरा। जिससे उनके घुटने सूज गए और उन्हें ज्वर भी आने लगा। फिर ५ अप्रैल सन् १६८० का वह अशुभ दिन भी आ ही पहुँचा जबकि इस अनुपम वीर ने इस धराधाम से प्रयाण कर अपनी ऐहिक लीला समाप्त की। किन्तु उनका यश आज भी जीवित है।

चरित्र

शिवाजी बड़े धार्मिक एवं आत्मसंयमी भी थे। अपने धर्म गुरु समर्थ रामदासजी के आदेशानुसार ये सदा हिंदुओं की रक्षा, अत्याचारियों का दमन और सदाचार का प्रचार करते रहे। यद्यपि वे मुसलमानों के विरोधी थे, किन्तु उन्होंने कभी भी मकबरे, मसजिद, कुरानादि की अप्रतिष्ठा नहीं की। यह कह सकना तो कठिन है कि हिन्दी भाषी जनता के बीच भूषण ने शिवाजी को अमर किया अथवा शिवाजी ने भूषण को अमर किया। परन्तु फिर भी इनका ऐसा अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है कि आज भी एक के प्रसंग में दूसरे का नाम सहसा स्मरण हो जाता है।

शुद्धाशुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१	मूव	मूल
५	५	गमंड	घमंड
६	११	स्थाम	स्थान
७	१७	वालियाँ	बालियाँ
८	१५	गइ	गई हैं
८	२३	वृत्यानुप्रास	वृत्यनुप्रास
१९	२१	छोट-छोट	छोटे-छोटे
२२	२२	यहराणा	महाराणा
२४	४	मुतेन्द्रिय	मूत्रेन्द्रिय
२६	१६	बानो	बाणों
३१	१०	सलहरे	सलहेर
३१	२१	वृत्यानुप्रास	वृत्यनुप्रास
३२	१६	प्रान्ता	प्रान्तों
३३	१७	थी	था
३८	९	वना	घना
३९	२	वृत्यानुप्रास	वृत्यनुप्रास
४१	१५	„	„
४२	७	गुरुड़	गरुड़
४३	१५	खिराजा	खिराज
५७	१७	वृत्यानुप्रास	वृत्यनुप्रास
५७	१८	दाक्षिणी	दक्षिणी
६२	५	'स'	'से'

विषय-सूची

—:○:—

शिवा-बावनी

कवित्त-मनहरण

मूल—साजि चतुरंग वीर रंग में तुरंग चढ़ि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है।
'भूषन' भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी नद मद गैबरन के रलत है॥
ऐल फैल खैल-भैल खलक में गैल गैल,
गजन की ठैल-पैल सैल उसलत है।
तारा सो तरनि धूरि धारा में लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यों हलत है॥ १॥

शब्दार्थ—चतुरंग=रथ, हाथी, घोड़े, पैदल की चतुरंगिनी सेना। सरजा=(फ़ारसी) सर्व शिरोमणि, यह उपाधि अहमदनगर के बादशाह ने मालोजी को दी थी। शिवाजी को भी इसी उपाधि से भूषण पुकारते हैं। नाद=शब्द, आवाज़। गैबरन=गय+बरन, श्रेष्ठ हाथियों अर्थात् अभिमानी हाथियों। रलत=मिलती है। ऐल=कोलाहल। फैल=फैलने से। खैल-भैल=खलबली। खलक=(अरबी) संसार। गैल=मार्ग। ठैल पैल=धक्कमधक्का। उसलत=उखड़ते हैं। थारा=थाल। पारावार=समुद्र।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि सरजा शिवाजी महाराज बड़े वीर-रंग (उत्साह) से अपनी चतुरंगिनी सेना तैयार कर घोड़े पर

सवार हो युद्ध में विजय-प्राप्त करने के लिए चलते हैं तब बेहद नगारों का शब्द होता है, और श्रेष्ठ हाथियों का मद नदी और नदों में मिलता है (अर्थात् मतवाले हाथियों के मस्तक से मद निकल कर नदी रूप हो बहता है)। फौज के कोलाहल के कारण संसार में मार्ग २ बहुत खलबली फैलती है और हाथियों की धक्कम धक्का से पहाड़ तक उखड़ जाते हैं। सेना के चलने से इतनी धूल आकाश में छाती है कि सूर्य उससे ढकजाने के कारण तारे के समान दीखता है। और जिस भाँति थाली में पारा हिलता है उसी प्रकार (शिवाजी की सेना के भार से) समुद्र हिलता है।

अलंकार—*उपमा। 'तरनि' उपमेय 'तारा' उपमान 'सो' वाचक और 'छोटा' जो गुण है, धर्म है। पुनः 'पारावार' उपमेय 'पारा' उपमान जिमि, 'यों' वाचक और 'हलत' धर्म कथन किये हैं।*

सूचना—मनहरण कवित्त में ३१ वर्ण होते हैं। १६ और १५ पर विराम होता है।

मूल—बाने फहराने घहराने घंटा गजन के,
नाहीं ठहराने राव राने देश देश के।
नग बहराने ग्राम नगर पराने सुनि,
बाजत निसाने सिवराज जु नरेश के॥
हाथिन के हौदा उकसाने, कुंभ कुंजर के,
भौन को भजाने अलि, छूटे लट केस के।

दल के दरारेन ते कमठ करारे फूटे,
केरा केसे पात बिहराने फन सेस के ॥ २ ॥

शब्दार्थ—बाने=झंडीदार भाले। बहराने=भरभरा कर गिर गये। पराने=(पलायन) भाग गये। निसाने=झंडे; परन्तु यहाँ भूषणजी ने इसे 'डंके' के आशय में लिखा है। उकसाने=अपने स्थान से हट गये, खिसक गये। कुम्भ कुंजर के=हाथियों के मस्तक के। भौन=भवन, घर। दरारेन=दरेरे, दबाव, रगड़। कमठ=एक कच्छप, शेषनाग इस पर रहते हैं। करारे=कठोर। बिहराने=बिदराने, विदारित हो गये, फट गये।

अर्थ—(शिवाजी के युद्ध के) झंडों के फहराने और हाथियों के घंटे बजने पर देश २ के छोटे बड़े राजे महाराजे (शिवाजी की सेना के सम्मुख) नहीं ठहर सके। महाराज शिवाजी के डंके की आवाज से नग (पहाड़) फट कर गिर पड़े। गांव और शहरों के लोग उसे (घंटों की आवाज़ को) सुनकर भाग गये। हाथियों के हौदे ढीले पड़ गये। हाथियों के मस्तकों के भौंरे (मद के कारण हाथियों के मस्तकों पर भौंरे उड़ते हैं) अपने २ घरों को भाग गये। (शत्रुस्त्रियों के) बालों की लटें छूट गईं। सेना के दबाव के कारण कठोर कच्छप भी फूट गया (अर्थात् कमठ के टुकड़े २ होगये) और शेषनाग के सहस्र फन केले के पत्तों की तरह फट गये।

अलंकार—पूर्णोपमा। 'फन सेस' उपमेय 'केरा के पात' उपमान 'से' वाचक और 'बिहराने' साधारण धर्म कथन किया है।

मूल—प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहू,
मिलि मिलि आपुस में गावत बधाई है।
भैरों भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से,
जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमात जुरि आई है।
किलकि किलकि कै कुतूहल करत काली,
डिम डिम डमरू दिगंबर बजाई है।
सिवा पूछै सिव सों समाज आजु कहाँ चली,
काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है॥ २॥

शब्दार्थ—निसाचर=रात में घूमने वाले, राक्षस। बधाई=आनन्द सूचक गीत। भूरि=बहुत, अनेकों। भूधर=पर्वत। जुत्थ=यूथ, झुण्ड, समूह। किलकि=जोर से चिल्ला कर। कुतूहल=कौतुक, खेल, क्रीड़ा। डमरू=शिवजी के बजाने का बाजा, डमडमी। दिगंबर=शिवजी। भृकुटी चढ़ाई है=क्रोधित हुए हैं।

अर्थ—(युद्ध में मरे हुए वीरों का रुधिर और मांस मिलने की आशा से) पिशाच, प्रेतिनी, राक्षस और राक्षिसियाँ आपस में मिलजुल कर आनन्द गीत गारहे हैं। पहाड़ों के समान डरावने अनेकों भैरव, भूत, प्रेत और योगिनियाँ यूथ के यूथ मंडली बाँध २ कर इकट्ठे हो रहे हैं। कालिका प्रसन्नता के कारण ज़ोर २ से शब्द करती हुई क्रीड़ा करती है (अर्थात् नृत्यादि विनोद बातें करती है), और शिवजी अपना डमरू बजा रहे हैं। (यह सब शिवजी की समाज का आनन्दोत्सव देखकर) शिवा (पार्वती जी) शिवजी से पूछती हैं कि आज यह आपकी मंडली कहाँ चली ? वे उत्तर देते हैं कि शिवाजी किसी पर क्रोधित हुए हैं।

अलंकार—अप्रस्तुत प्रशंसा। मुख्य बात 'रणभूमि में हमारी समाज चल रही है,' न कहकर शिवजी ने उसका इस अप्रस्तुत बात 'शिवाजी किसी पर क्रोधित हुए हैं,' कहकर प्रस्तुत 'रणभूमि' की ओर संकेत किया है।

मूल—बद्दल न होंहिं दल दच्छिन गमंड माँहिं,
घटा जु न होंहिं दल सिवाजी हँकारी के।
दामिनी दमंक नाँहि खुले खग्ग बीरन के,
बीर सिर छाए लखु तीजा असवारी के॥
देखि देखि मुगलों की हरमैं भवन त्यागैं,
उझकि-उझकि उठैं बहत बयारी के।
दिल्ली मति-भूली कहै बात घन घोर-घोर,
बाजत नगारे ये सितारे-गढ़ धारी के॥ ४॥

शब्दार्थ—हँकारी=अहंकारी। दामिनी=बिजली। सिरछाप=सिरपेंच (पगड़ी) का चिह्न, यह चाँदी के तारों का कढ़ा होता है। तीजा असवारी= श्रावण शुक्ला तृतीया को यह त्यौहार मनता है। इस दिन राजा महाराजाओं की सवारियाँ निकलती हैं। हरमैं=बेगमें, मुसल्मान पर्दे वाली औरतें। उझकि उठें=चौंक उठती हैं। बयारी=हवा। सितारागढ़धारी=शिवाजी।

अर्थ—(शिवाजी के आतंक से भयभीत हुए दिल्ली-निवासियों और मुग़ल स्त्रियों को वर्षाऋतु के बादल और बिजलियों में शिवाजी के दलका ही आभास होता है)। बादलों को देख कर वे कहते हैं कि यह घमंड में भरी हुई दक्षिणी सेना है

बादल नहीं हैं; न ये घटाएँ हैं, यह अहंकारी शिवाजी का दल (सेना) है; और न ये बिजलियों की दमक है, ये तो वीरों के नग्न खड्ग (तलवार) और तीज की सवारी में निकले हुए योधाओं के सिरपेंच के चिल्ले हैं । इस भाँति बादल और बिजलियों को देख २ कर मुग़लों की स्त्रियाँ अपने २ भवनों (घरों) को छोड़कर भाग जाती हैं, और हवा के शब्द से बार २ चौंक उठती हैं। बादलों की गर्जना सुनकर बुद्धि भ्रष्ट दिल्ली निवासी यह बात कहते हैं कि ये शिवाजी के नगारे बजरहे हैं (गर्जना नहीं है)।

अलंकार—*शुद्धापन्हुति । सत्य बात, 'बादल' और 'बिजलियों' को छिपाकर इनके स्थाम पर 'दल' और 'खड्ग', एवं वीरों के 'सिरपेंच' को क्रमशः स्थापित किया है ।*

मूल—बाजि गजराज सिवराज सैन साजत ही,
दिल्ली दिलगीर दसा दीरघ दुखन की ।
तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न,
घामैं घुमरातीं छोड़ि सेजियाँ सुखन की ॥
'भूषन' भनत पति बाँह बहियाँ न तेऊ,
छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की ।
बालियाँ बिथुर जिमि आलियाँ नलिन पर,
लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की ॥ ५ ॥

शब्दार्थ—दिलगीर=(फ़ारसी) दुखी, दीन। तनियाँ=चोली, कंचुकी। तिलक=मुसल्मानी ढीला और पिंडली तक लम्बा कुर्त्ता।

सुथनियाँ=पायजामा । पगनियाँ=जूतियाँ । घुमराती=घूमतीं । पति बाँह बहियाँ न=पति की बाहों से न बहीं अर्थात् पति से अलग न हुई। छहियाँ=छाँह। छबीली=छबि वाली, सुन्दरी। रूखन=रूखों, (पेड़ों) की। बालियाँ=बालों की लटें। आलियाँ= अलियाँ, भ्रमरियाँ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि युद्धार्थ शिवाजी की सेना के घोड़े और हाथी सजते ही दीन दिल्ली निवासियों की अति दुःखमय दशा होगई। घबड़ाहट के कारण मुग़लों की स्त्रियाँ बिना चोली, कुर्ते, पायजामे, और जूतियाँ पहिने सुख शैया त्याग कर कड़ी घाम (धूप) में भागने लगीं। सुन्दर युवतियाँ जिनका कभी अपने पतियों से वियोग नहीं हुआ था वे भी पेड़ों की छायाँ ढूँढने लगीं। उनके मुखों पर बालों की लटें ऐसी बिथुरी (तितर-बितर पड़ी) हुई थीं जैसे कि कमलों पर भौंरियाँ मडरा रही हों, और भय के कारण उनके मुखों की लाली मलीन हो रही थी (अर्थात् भय से और जंगल में इधर उधर फिरने से उनके मुखों का रंग फीका पड़गया था)।

अलंकार—*उपमा*। '*बालियाँ*' *उपमेय* '*आलियाँ*' *उपमान*, '*बिथुर*' *साधारण धर्म और* '*जिमि*' *वाचक है*।

मूल—कत्ता की कराकन चकत्ता को कटक काटि,
कीन्हीं सिवराज बीर अकह कहानियाँ।
'भूषन' भनत तिहुँ लोक में तिहारी धाक,
दिल्ली औ बिलाइति सकल बिललानियाँ॥

आगरे अगारन ह्वै फाँदती कगारन छ्वै,
बाँधतीं न बारन मुखन कुम्हिलानियाँ ।
कीबी कहैं कहा औ गरीबी गहैं भागी जायँ,
बीबी गहैं सूथनी सु नीबी गहैं रानियाँ ॥ ६ ॥

शव्दार्थ—कत्ता=बाँका, एक प्रकार का तलवार जैसा शस्त्र । कराकन=कड़ाकों से, चोटों से । चकत्ता=चंगेज़ खाँ के वंशज मुग़ल, औरंगज़ेब । कटक=सेना । अकह=अकथनीय । धाक=आतंक । बिललानियाँ=घबड़ा गई, व्याकुल होगई । अगारन=मकानों में, महलों में । कीबी=करेंगी । नीबी=लहँगे का नाड़ा, धोती का वह भाग जिसे चुनकर स्त्रियाँ नाभि के नीचे खोंसती हैं ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे वीर शिवाजी ! आपने कत्ता शस्त्र की चोट से औरंगज़ेब की सेना को काट काट कर ऐसे महत्व के काम किये हैं कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता । तीनों लोकों में आपका आतंक ऐसा छागया है कि उस से दिल्ली एवं अन्यान्य विलायतें सब व्याकुल हो गइ । भय के कारण (बेग़में और रानियाँ) आगरे के महलों की मुँडेरों को पकड़ पकड़ कर कूद कर भाग रही हैं । उनके मुख मंडल कुम्हिला गये हैं और जल्दी के कारण वे अपने बालों को भी नहीं बाँधतीं (अर्थात् उनके बाल बिखर रहे हैं) । दीन दशा ग्रसित बेग़में पायजामा और रानियाँ नीवी पकड़े भागती हुई कहती जाती हैं कि अब हम क्या करेंगी ?

अलंकार—क, त, न, और ग अक्षरों की कई बार आवृति होने से 'वृत्यानुप्रास' अलंकार है ।

मूल—ऊँचे घोर मंदर के अंदर रहन वारी,
ऊँचे घोर मंदर के अंदर रहाती हैं।
कंदमूल भोग करैं कंदमूल भोग करैं,
तीन बेर खाती सो तो तीन* बेर खाती हैं॥
भूषन सिथिल अंग भूषन सिथिल अंग,
बिजन डुलातीं ते वै बिजन डुलातीं हैं।
'भूषन' भनत सिवराज बीर तेरे त्रास,
नगन जड़ाती तेऽब नगन जड़ाती हैं॥ ७॥

शब्दार्थ—मंदर=मंदिर, महल; मंदर, पर्वत। कंद मूल=कंद मूलक (व्यंजन) ऐसे व्यंजन जिनमें कंद (मीठा) पड़ा हो; तथा कंद और जड़ गाजर, मूली आदि। तीन बेर=तीन मर्तबा तथा बेरी के तीन बेर। भूषन=जेवरों से तथा भूखों से। बिजन=व्यजन, पंखा; तथा विजन, वीरान अर्थात् जंगल। तेऽब=ते (वे) अब। नगन जड़ाती=गहनों में नग जड़वाती थीं तथा नग्न जाड़े मरती हैं।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे वीरवर शिवाजी! आपके भय के कारण जो मुग़ल घराने की स्त्रियाँ बड़े २ ऊँचे महलों के भीतर रहती थीं, वे अब ऊँचे २ भयानक पर्वतों में छिपी रहती हैं। जो पहिले मिठाई खाती थीं वे अब कंद और मूल (अर्थात शकरकंद और गाजर मूली आदि जड़ें)

---

*इस 'तीन बेर' के स्थान में 'बीन बेर' भी पाठ है परन्तु यहाँ अधिक उत्तम मालूम नहीं होता। मिश्रबन्धुओं ने भी 'तीन बेर' ही लिखा है अतः यहाँ यही पाठ अधिक मान्य प्रतीत होता है।

खातीं हैं। तीन २ बार भोजन करने वाली अब केवल बेरीके तीन बेर खाकर ही गुजारा करती हैं। गहनों के कारण जिनका अंग शिथिल था, अब वे भूख के मारे दुर्बल हो रही हैं। जो सदा पंखे झलती रहती थीं वे अब निर्जन जंगल में मारी २ फिरती हैं और जो रत्नजटित गहने पहनती थीं वे अब बिना वस्त्र के नग्न जाड़े मरती हैं।

अलंकार—*'यमक'। यहाँ मंदर, कन्दमूल, तीन बेर, भूषन, विजन और नगन आदि शब्दों की भिन्नार्थ में क्रमशः आवृत्ति दो-दो बार हुई है।*

मूल—उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग,
तेऊ सग-बग निसि दिन चली जाती हैं।
अति अकुलातीं मुरझातीं न छिपातीं गात,
बात न सुहातीं बोलें अति अनखाती हैं॥
'भूषन' भनत सिंह साहि के सपूत सिवा,
तेरी धाक सुनै अरिनारी बिललाती हैं।
कोऊ करैं घाती कोऊ रोतीं पीट छाती घरै,
तीन बेर खातीं तेऽब तीन बेर खाती हैं॥ ८॥

शब्दार्थ—सगबग=भयभीत, शीघ्रतापूर्वक। सोहाती=अच्छीलगतीं। अनखातीं=नाराज़ होती हैं, झुंझलाती हैं। घाती=आत्मघात।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे सिंह के समान बीर साहजी के सुपुत्र महाराज शिवाजी! आपके प्रताप को सुनकर शत्रु स्त्रियाँ व्याकुल हो रुदन करती हैं। जिन सुकुमार स्त्रियों ने

कभी पलंग से उतर कर पृथ्वी पर पैर नहीं रक्खा था अब वे भी भय के कारण रात दिन भगी चली जा रही हैं। वे अत्यन्त व्याकुलता से मुरझा रही हैं और गात (शरीर) पर कपड़े तक डालने का ध्यान नहीं करतीं। उन्हें किसी की बात अच्छी नहीं लगती उलटा कुछ बोलने पर झुँझला उठती हैं। कोई आत्मघात करती हैं, कोई छाती पीट २ कर रोतीं हैं। जो घर में पहिले तीन २ बार भोजन करती थीं वे ही अब केवल बेरी के तीन बेर खाकर गुज़ारा करतीं हैं।

अलंकार—*अनुप्रास, उपमा और यमक। 'सिंह-साहि' में, सिंह समान साहि, 'उपमा'। तीनबेर, तीनबेर की भिन्नार्थ आवृत्ति में 'यमक' है।*

मूल—अन्दर ते निकसीं न मन्दर को देख्यो द्वार,
बिन रथ पथ ते उघारे पाँव जाती हैं।
हवाहू न लागती ते हवा ते बिहाल भईं,
लाखन की भीर में सम्हारती न छाती हैं॥
'भूषन' भनत सिवराज तेरी धाक सुनि,
हयादारी चीर फारि मन झुँझलाती हैं।
ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की,
नासपाती खातीं ते बनासपाती खातीं हैं॥ ९॥

शब्दार्थ—बिहाल=बेहाल, व्याकुल। हयादारी=लज्जावती। झुंझलाती=क्रुद्ध होती। नरम=नम्र, दीन। बनास्पती=शाक-पात (बनस्पति)।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे शिवाजी महाराज ! आपकी धाक (आतंक) सुनकर बादशाह की बेगमें जिन्होंने कभी भीतर से निकल कर अपने महलों का दरवाजा भी नहीं देखा था, अब वे बिना रथ सवारी के नंगे पैर रास्ते में जाती हैं। जिनको कभी हवा भी नहीं लगती थी (अर्थात् जो महल के अन्दर ही रहती थीं) अब वे ही हवा से व्याकुल हो रही हैं और ऐसी घबड़ा रही हैं कि लाखों मनुष्यों की भीड़ में भी वे अपने छाती को नहीं सँभालतीं (कि उनपर वस्त्र पड़ा है या नहीं)। आपके भय के कारण वे लज्जावती बेगमें मनमें झुँझला कर अपने कपड़े फाड़ डालती हैं। इस भाँति बादशाह की बेगमों पर ऐसी दीनावस्था उपस्थित हुई है कि जो पहिले नासपाती आदि मेवा फल खाती थीं अब वे हीं सागपात खाकर गुजारा करती हैं।

अलंकार—*अनुप्रास और यमक। र, थ, ती वर्णों की आवृत्ति में 'अनुप्रास;'। नरम, हरम, नासपाती, बनासपाती में 'यमक'।*

मूल—अतर गुलाब रसचोवा घनसार सब,
सहजसुबास की सुरति बिसराती हैं।
पल भर पलंग ते भूमि न धरति पाँव,
भूलीं खान-पान फिरैं बन बिललाती हैं॥
'भूषन' भनत सिवराज तेरी धाक सुनि,
दारा हार बार न सम्हारैं अकुलाती हैं।
ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की,
नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं॥ १०॥

शब्दार्थ—चोवारस=सुगन्धित द्रव्य, जो केसर कस्तूरी आदि से बनाया जाता है। घनसार=कपूर ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे महाराज शिवाजी! आपकी धाक (आतंक) को सुनकर बादशाहों की बेगमें भय के कारण गुलाब का इत्र, चोवारस और कपूर आदि श्रेष्ठ सुगंधित सामग्रियाँ सब भूल गई हैं। जिन्हों ने सुकुमारता के कारण पलंग से उतर कर पृथ्वी पर पल भर भी पैर नहीं रक्खे थे; वे भूखी प्यासी बन-बन मारी-मारी फिर रही हैं। व्याकुलता के कारण वे अपने हार और केशों को भी नहीं सँभालतीं। बादशाहों की बेगमों की ऐसी दीन दशा होगई है कि जो पहिले नासपाती आदि मेवा फल खाती थीं अब वे सागपात खाती हैं।

अलंकार—*यमक। नरम, हरम, नासपाती, बनासपती आदि शब्दों की भिन्नार्थ में आवृत्ति हैं।*

मूल—सोंधे को अधार किस मिस जिनको अहार,
चारि को सो अंक लंक चन्द सरमाती हैं।
ऐसी अरिनारी सिवराज बीर तेरे त्रास,
पायन में छाले परे कन्दमूल खाती हैं॥
ग्रीषम तपनि ऐसी तपती न सुनी कान,
कंज कैसी कली बिन पानी मुरझाती हैं।
तोरि तोरि आछे से पिछौरा सो निचोरि मुख
कहैं सब* कहाँ पानी मुकतों में पाती हैं ॥ ११ ॥

* इस स्थान पर 'अब' पाठ भी है।

शब्दार्थ—सौंधे=सुगंध। चार को सो अंक लंक=चार के अंक (४) के समान (पतली) कमर। कंज=कमल। आछे से=अच्छे से, सर्वोत्तम पिछौरा=चादर। कहाँ पानी मुकतों में=मोतियों में पानी कहाँ है? (मोतियों का पानी उनकी चमक होती है, परन्तु प्यासी स्त्रियों ने उसे सचमुच का पानी माना है।)

अर्थ—जिनका जीवन सुगंधि पर निर्भर था, जिनका भोजन किशमिश आदि मेवे थे, और चार के अंक के (मध्यभाग के) समान जिनकी वहुत पतली कमर थी, और जो (अपने सौन्दर्य में) चन्द्रमा को भी लज्जित करती थीं; ऐसी शत्रुस्त्रियों के हे वीर शिवाजी! आपके भय के कारण भागते-भागते पैरों में छाले पड़ गये हैं, और वे अव कंदमूल खाकर अपना गुज़ारा करती हैं। ऐसी तेज़ गर्मी में जैसी कभी सुनी भी नहीं गई थी, वे कोमल स्त्रियाँ प्यास के करण कंज (कमल) को कलियों की भाँति कुम्हला रही हैं। वे सब बढ़िया चादर से मोती तोड़ तोड़ कर मुहँ में निचोड़ती हुई कहती हैं कि इनमें पानी कहाँ हैं? मिलता नहीं।

अलंकार—*उपमा, प्रतीप और भ्रम। उपमा-चार को सो अंक-लंक, में। प्रतीप—चंद सरमाती हैं। भ्रम—'तोरि तोरि आछे····कहां पानी मुक्तों में पाती हैं।'*

मूल—साहि सिरताज औ सिपाहिन मैं पातसाह,
अचल सुसिंधु के से जिनके सुभाव हैं।

'भूषन' भनत परी शस्त्र रन सेवा धाक,
काँपत रहत न गहत चित चाव हैं ॥
अथह विमल जल कालिन्दी के तट केते,
परे युद्ध विपति के मारे उमराव हैं ।
नाव भरि बेगम उतारैं बाँदी डौंगा भरि,
* मक्कामिस साह उतरत दरयाव हैं ॥१२॥

शब्दार्थ—चाव=रुचि, उत्साह। कालिन्दी=यमुनाजी। डौंगा=छोटी नाव। मिस=बहाने।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि बादशाहों में श्रेष्ठ, सूर शिरोमणि, अचल समुद्र की भाँति गंभीर स्वभाव वाले बादशाह भी रणस्थल में शिवाजी के शस्त्रों की धाक सुनकर उत्साह हीन हो काँपते रहते हैं। कितने ही सरदार युद्ध की आपत्तियों से ग्रसित हो अथाह और निर्मल यमुनाजी के किनारे छिपे पड़े हैं। बादशाह एवं सरदार अपनी-अपनी बेगमों को नावों में और दासियों को डोंगियों में भर-भर कर तीर्थ स्थान मक्का जाने का बहाना कर समुद्र के पार करते हैं (अर्थात् मुसलमान अपने-अपने ज़नानों को शिवाजी के भय के करण हिन्दुस्तान के बाहर भेज रहे हैं।

अलंकार—*उपमा और पर्यायोक्ति। उपमा—अचल सुसिंधु के से जिनके सुभाव हैं। पर्यायोक्ति—मक्का मिस उतरत दरयाव हैं।*

---

*महाराज शिवाजी तीर्थ स्थान पर जाने वाले मुसल्मानों को नहीं छेड़ते थे

मूल—किबले की ठौर बाप बादसाह साहजहाँ,
ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है।
बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो,
मेहर हू नाहिं माँ को जायो सगो भाई है।
बन्धु तौ मुरादबक्स बादि चूक करिबे को,
बीच दै कुरान खुदा की क़सम खाई है।
'भूषन' सुकवि कहै सुनौ नवरगज़ेब,
एते काम कीन्हैं फेरि पातसाही पाई है ॥१३॥

शब्दार्थ—किबले=फ़ा० क़िब्ला; मुसल्मानों का तीर्थ स्थान, वा पूज्य देवता। आगिलाई है=आग लगा दी। मेहर=कृपा, दया। बादि=व्यर्थ। चूक=दोष, गलती, बुराई।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे औरंगज़ेब! तुमने अपने पिता शाहजहाँ को जो पूज्य देवता के (समान) थे क़ैद कर ऐसा घोर अनर्थ किया मानो अपने तीर्थ-स्थान मक्का को जला दिया हो। अपने माँ जाये सगे जेष्ठ भ्राता दारा को क़ैद करने में भी तुम्हें कुछ दया न आई। और अपने भाई मुरादबख़्श के साथ किसी प्रकार की चूक (बुराई) न करने की तुमने क़ुरान बीच में रख कर कसम खाई थी (अर्थात मुरादबख़्श की रक्षा के लिए धर्म ग्रंथ की सौगन्ध खाने पर भी उसे मार डाला)। इतने अनर्थ कार्य करने के पश्चात तुम्हें बादशाहत मिली है।

अलंकार—उत्प्रेक्षा। 'मानो मक्के आग लाई है', में।

मूल—हाथ तसबीह लिये प्रात उठै बन्दगी को,
आपही कपटरूप कपट सुजपके।
आगरे मैं जाय दारा चौक मैं चुनाय लीन्हों,
छत्र हू छिनायो मानों मरे बूढ़े बप के॥
कीन्हों है सगोत घात सो मैं नाहिं कहौं फेरि,
पील पै तुरायो चार चुगल के गपके।
'भूषन' भनत छरछंदी मतिमंद महा,
सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तपके* ॥१४॥

शब्दार्थ—तसबीह=(फा०) मुसलमानी माला। बंदगी=ईश्वर स्मरण कपट सुजप के=कपट का जप करके। मानो मरे=मानो मर गया हो। बप=बाप। सगोत=अपने वंश वाले। पील=(फा०) फील, हाथी। चार=चर, दूत। गप के=गप्प उड़ाने से, झूँठी कहने सुनने से। छरछंदी=छली। तप के=तप करने के लिये।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे औरंगज़ेब! तुम स्वयं कपट रूप हो, प्रातःकाल ही उठकर ईश्वर भजन के लिए माला हाथ में लेकर कोरा कपट का ही जप जपते हो। तुमने अपने सगे भाई दारा को आगरे के किले के चौक में गड़वा दिया। जीवित बाप को ही मरा मान उसका राज-छत्र छीन लिया। मैं और अधिक कहाँ तक कहूँ तुमने बिना विचार किये ही चुगलखोर दूतों की झूँठी बातों पर अपने ही वंश वालों को हाथी से दबवा-दबवा कर मरवाडाला। तुम बड़े ही चाल

*कहते हैं कि छन्द नं० १३ और १४ को भूषण कवि ने औरंगज़ेब से अभयदान लेकर भरे दरबार में निर्भयता पूर्वक सुनाया था।

बाज़ और खोटी बुद्धि वाले हो, परन्तु लोगों की दृष्टि में महात्मा बन रहे हो लेकिन यह ऐसी ही बात है जैसे सैकड़ों चूहे खाकर बिल्ली तपस्या करने बैठी हो।

अलंकार—छेकोक्ति । औरंगज़ेब के कपट को 'बिल्ली' की उपमा लोकोक्ति से दी है ।

मूल—कैयक हजार जहाँ गुर्ज-बरदार ठाढ़े,
करिकै हुस्यार नीति पकरि समाज की।
राजा जसवंत को बुलाय कै निकट राख्यो,
तेऊ लखैं नीरे जिन्हें लाज स्वामि-काज की ॥
'भूषन' तबहुँ ठठकत ही गुसलखाने,
सिंह लौं झपट गुनि साहि महाराज की ।
हटकि हथ्यार फड़ बाँधि उमरावन की,
कीन्ही तब नौरंग ने भेट* सिवराज की ॥१५॥

शब्दार्थ—गुर्जबरदार=गदाधारी । नीति पकरि समाज की=शाही दरबार के नियमानुसार । जिन्हें लाज स्वामि काज की=स्वामि का कार्य चाहने वाले, स्वामि के हित चिन्तक । फड़=कतार ।

अर्थ—(शिवाजी से मिलने के समय औरंगज़ेब ने) शाही दरबार के नियमानुसार कई हज़ार गदाधारी वीर पुरुष बड़ी सावधानी

*शिवाजी और औरंगजेब की भेंट संवत् १७२३ वि०—१२वीं मई सन् १६६६ ई० को आगरे में हुई थी, दिल्ली में नहीं। देखो—नन्दकुमारदेव शर्मा रचित 'वीर केशरी शिवाजी' का ३८६वाँ पृष्ठ।

के साथ खड़े कर दिये। जोधपुर के महाराजा यशवंतसिंह जी को अपने निकट ही बुला लिया और अन्य बहुत से स्वामि के हित चिन्तक सरदार भी समीप खड़े हो गये। भूषण कवि कहते हैं कि औरंगज़ेब ने यह समझ कर कि शिवाजी सिंह की भाँति (अचानक) न झपट पड़े; गुसलखाने (स्नानागार) के पास ही ठठकते २ हथियारों की मनादी करने पर भी (औरंगज़ेब ने दरबार में हथियार लाने की मनादी शिवाजी की भेंट के समय करदी थी।) अपने सरदारों की कतार बाँध कर शिवाजी से भेंट की।

अलंकार—*'सिंहलों झपट' में, उपमा। हेतु—'सिंह लौं झपट' गुनि, कारण, 'ठिठकत ही गुसल खाने', कार्य, का एक साथ कथन है।*

मूल—सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिवे के जोग
ताहि खरो कियो जाय जारिन के नियरे।
जानि गैर मिसिल गुसैल गुसा धारि उर,
कीन्हों न सलाम न बचन बोले सियरे॥
'भूषन' भनत महावीर बलकन लाग्यो,
सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे।
तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भये,
स्याह मुख नौरंग सिपाह मुख पियरे॥१६॥

शब्दार्थ—जारिन=पाँच हज़ार सेना के स्वामि, पंचहजारी, छोटे-छोटे सरदार। गैर मिसिल=बेमौके, अनुचित स्थान पर। गुसैल=क्रोधी

बलकन लाग्यो=क्रोधित हो योग्यअयोग्य जो जी में आया कहने लगे, बकने लगे। उड़ाय गये जियरे=जी उड़ गये, प्राण सूख गये, बहुत घबड़ा गये।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि जो शिवाजी सबसे ऊपर स्थान पाने के योग्य थे उन्हें औरंगज़ेब ने अपने पंच हजारी जैसे छोटे २ सरदारों के निकट खड़ा करवा दिया। इस भाँति अनुचित व्यवहार हुआ जान गुस्सावर शिवाजी ने मन में अत्यन्त क्रोधित हो औरंगज़ेब को न सलाम किया न शीतल बचन ही बोले उलटे मनमानी बातें कहने लगे जिससे समस्त पातसाही (शाही दरबार) के प्राण सूख गये (अर्थात् वे अत्यन्त भयभीत हो गये)। शिवाजी का तमक (क्रोध) से लाल मुख देख औरंगज़ेब का चेहरा स्याह तथा सिपाहियों का पीला पड़ गया।

अलंकार—*विषम। 'लाल मुख सिवा' रूप कारण से 'स्याहमुख नवरंग आदि कार्य्य विरुद्ध हैं'। तीसरा विषम है।*

मूल—राना भो चमेली और बेला सब राजा भये,
ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है।
सिगरे अमीर आनि कुंद होत घर घर,
भ्रमत भ्रमर जैसे फूल की समाज है॥
'भूषन' भनत सिवराज वीर तैंहीं देस-
देसन मैं राखी सब दच्छिन की लाज है।
त्यागे सदा षटपद—पद अनुमान यह,
अलि नवरंगज़ेब चंपा सिवराज है॥१७॥

शब्दार्थ—षटपद=भौंरा। षटपद-पद=भौंरे का पद (अधिकार), भौंरे का काम, अर्थात् पुष्प रस लेना। चंपा=पुष्प विशेष, इस पर भौंरा नहीं बैठता।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि औरंगज़ेब रूपी भ्रमर प्रतिदिन स्थान स्थान पर मँडराता हुआ रस लेता है (अर्थात् जगह जगह के राजाओं को परास्त कर उन से सेवा लेता है)। महाराणा उदयपुर (राजसिंह) और राजा लोग चमेली और बेला के समान और अन्य सब सरदारलोग कुंद के फूल के समान औरंगज़ेब रूपी भ्रमर को हो गये हैं (अर्थात् औरंगज़ेब ने उन्हें परास्त कर अपने आधीन कर लिया है)। वह (औरंगज़ेब) घर २ (राज्य २ में) इस भांति घूमता है जैसे फूलों पर भ्रमर मँडराता हो। किंतु हे वीरवर शिवाजी! तुमने ही इन समस्त देशों में दक्षिण देश की लज्जा रखी है (अर्थात् तुमने दक्षिण देश को परास्त होने से बचाकर औरंगज़ेब रूपी भ्रमर को यहाँ का पुष्प रस नहीं लेने दिया)। ऐसा अनुमान होता है कि औरंगज़ेब भ्रमर है तो शिवाजी चम्पा के फूल हैं क्योंकि चम्पा को पाकर ही भ्रमर अपना रसास्वादन कार्य त्यागता है।

अलंकार—रूपक। *औरंगजेब में 'भ्रमर' का आरोप किया है, तथा राणा में 'चमेली' पुष्प एवं अन्य राजाओं में अन्य पुष्पों का आरोप किया है, अन्त में शिवाजी में 'चम्पा' पुष्प का आरोप है।*

मूल—कूरम कमल कमधुज है कदम फूल,
गौर है गुलाब राना केतकी* विराज है।
पाँडरी पँवार जूही सोहत है चंदावत,
सरस बुंदेला सो चमेली साज बाज है॥
'भूषन' भनत मुचुकुन्द बड़ गूजर हैं,
बघेले बसंत सब कुसुम समाज है।
लेइ रस एतेन को बैठ न सकत अहै,
अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है॥१८॥

शब्दार्थ—कूरम=महाराज जयपुर कछवाहे होने के कारण कूर्मवंशी कहलाते हैं। कमधुज=कबंधज, जोधपुर के महाराजा; युद्ध में इनके पूर्वपुरुष जयचन्द महाराज कन्नौज का कबंध उठा था, (रुंड उठकर लड़ा था) इसी से उनके वंशी कबंधज कहलाते हैं।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि कछवाह वंशी जयपुर नरेश कमल हैं, कबंधज वंशी जोधपुर महाराज कदम्ब के पुष्प हैं, गौर क्षत्री लोग गुलाब हैं, उदयपुर महाराणा कटीली केतकी हैं, पँवार वंशी क्षत्री पांडुरी-पुष्प हैं, चाँदावत राजपूत जूही हैं, श्रेष्ठ राजसी ठाटवाले बुँदेला लोग चमेली हैं, बड़गूजरवंशी क्षत्री

*छन्द नं० १७ में महाराणा उदयपुर को चमेली पुष्प की उपमा दी है परन्तु वह इतनी फबती हुई नहीं है जितनी कि छन्द नं० १८ में केतकी की उपमा है। वास्तव में केतकी के रसास्वादन में भौंरे को उसके काँटों के कारण बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है, वैसे ही औरङ्गज़ेब ने भी बड़ी २ आपत्तियों का सामना करके महाराणा (राजसिंह) को वश में किया था

मुचुकुन्द-पुष्प हैं, और बघेले लोग बसंत ऋतु में खिलने वाले अन्य समस्त फूलों का समूह हैं। औरंगज़ेब रूपी भ्रमर इन समस्त पुष्पों का रस लेता है किंतु वह शिवाजीरूपी चम्पा पुष्प पर नहीं बैठ सकता (अर्थात् औरंगज़ेब ने इन समस्त क्षत्रीवंश के राजा महाराजाओं को परास्त कर दिया, किंतु तीक्ष्ण गंध वाले चम्पा पुष्प के समान प्रचण्ड प्रतापी महाराज शिवाजी के पास नहीं फटक सका)।

अलंकार—*रूपक, इस छन्द में भी औरंगजेब में 'भ्रमर' का आरोप है, अन्य राजाओं में भिन्न २ पुष्पों का आरोप किया है।*

मूल—देवल गिरावते फिरावते निसान अली,
ऐसे डूबे राव राने सबी गए लबकी।
गौरा गनपति आप औरन को देत ताप,
आपनी ही बार सब मारि गये दबकी॥
पीरा पयगम्बरा दिगम्बरा दिखाई देत,
सिद्ध की सिधाई गई रही बात रबकी।
कासी हू की कला जाती मथुरा मसीत होती,
सिवाजी न होतो तो सुनति होती सबकी॥ १९॥

शब्दार्थ—अली=मुहम्मद साहब के दामाद, मुसल्मानों के चौथे ख़लीफ़ा। गये लबकी=लबक गये, शीघ्रता से चले गये, भाग गये। दिगम्बरा=नग्न, प्रभाव शून्य (औरङ्ग़ज़ेब कट्टर सुन्नी मुसल्मान होने के कारण शिया मुसल्मानो से चिढ़ता था; सम्भव है कि शिया मुसल्मान पीर एवं फ़क़ीरों का मान औरङ्ग़ज़ेब के समय

में कुछ न रहा हो); तथा मुसल्मानी नग्न परमहंस (औलिया) रब=निराकार परमेश्वर। कला=शक्ति, देवताओं का प्रत्यक्ष प्रभाव। सुनति=सुन्नति, खतना, मुसल्मानी (मुसलमान मत का संस्कार, यह संस्कार पुरुष के मुतेन्द्रिय के अग्र भाग के ऊपर के ढीले चमड़े को काट डालने पर होता है)।

अर्थ—देवालय तोड़-तोड़कर गिरा दिये और अली के झंडे फहराने लग गये हैं। सब राव रानों की ऐसी डूब गई कि (देवस्थानों की रक्षा करना तो दूर रहा उलटे) सब डर-डर कर भाग गये। स्वयं गौरा (पार्वती) और गनेशजी जो दूसरों को दण्ड देने वाले हैं वे सब भी अपनी (रक्षा करने के) समय डर कर छिप गये। पीर और पैगम्बर सब प्रभाव शून्य दिखाई पड़ते हैं अथवा पीर, पैगम्बर, और औलिया दिखाई दे रहे हैं (अर्थात् कोई हिन्दू साधू सन्त नज़र नहीं आता सब मुसलमान फ़कीर ही फ़कीर दिखाई पड़ते हैं)। सिद्ध लोगों की सिद्धता चली गई और मुसलमानी मत की दुहाई फिर रही है। यदि शिवाजी न होते तो काशी का प्रत्यक्ष प्रभाव नष्ट हो जाता मथुरा में मसीत (मसज़िदें) बन जाती और समस्त हिन्दुओं को 'मुसल्मानी' करानी पड़ती।

अलंकार—*सभावना। 'सिवाजी न होतो तो सुनति होती सबकी' इस पद से यह अलंकार सिद्ध होता है।*

मूल—साँच को न मानै देवी देवता न जानै अरु,
ऐसी उर आनै मैं कहत बात जबकी।

और पात साहन के हुती चाह हिन्दुनकी,
अकब्बर साहजहाँ कहैं साखि तब की॥
बब्बर के तब्बर हुमायूँ हद बाँधि गये,
दोनो एक करीना कुरान बेद ढब की।
कासीहू की कला जाती मथुरा मसीत होती,
सिवाजी न होतो तो सुनति होती सब की॥ २०॥

शब्दार्थ—बब्बर=बाबर। तब्बर=टब्बर, टाबर, पुत्र। करीना कुरान बेद ढब की=कुरान और वेद की जो दो ढबें (रीतियां) हैं उनको एक में नहीं किया अर्थात् वेद की रीतियों को उठाने का प्रयत्न नहीं किया।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि मैं उस समय की बात कहता हूँ जब कि अन्य बादशाह थे, और जिन्हें हिन्दुओं की बड़ी चाह थी, जिसके साक्षी अकबर और शाहजहाँ हैं। बाबर के पुत्र हुमायूँ ने भी हिन्दुओं की मर्यादा ज्यों की त्यों रक्खी। उन्होंने बेद की रीतियों को उठाने का प्रयत्न नहीं किया (अर्थात् वैदिक धर्म वालों को ज़बर्दस्ती मुसल्मान नहीं बनाया) किन्तु औरङ्गज़ेब सत्य और देवी देवताओं का निरादर कर रहा है। यदि शिवाजी न होता तो काशी का प्रत्यक्ष प्रभाव चला जाता, मथुरा में मसज़िदें बन जातीं और समस्त हिन्दुओं को मुसल्मानी करानी पड़ती।

अलंकार—*संभावना, अन्तिम पद में।*

मूल—कुम्भकन्न असुर औतारी अवरंगज़ेब,
कीन्ही कत्ल मथुरा दोहाई फेरी रब की।

खोदि डारे देवी देव सहर महल्ला बाँके,
लाखन तुरुक कीन्हे छूट गई तबकी ॥
'भूषन' भनत भाग्यो कासीपति विस्वनाथ,
और कौन गिनती मैं भूली गति भव की ।
चारों वर्ण धर्म छोड़ि कलमा निवाज पढ़ि,
सिवाजी न होतो तो सुनति होती सब की ॥२१॥

शब्दार्थ—कुम्भकन्न=कुम्भकर्ण। कीन्ही कत्ल मथुरा=मथुरा में कत्ल-आम करवाया सन् १६६९ ई० में औरङ्गज़ेब ने केशवराय का मंदिर मथुरा में तुड़वा डाला; यह मंदिर महाराज बीरसिंहदेव बुन्देला ने ३३ लाख रुपया लगाकर बनवाया था। तबकी=(अर्बी), तबक, पर्त, तह, तबकाबन्दी, साम्प्रदायिक धर्म। भाग्यो कासी-पति विस्वनाथ=शिवजी भाग गये, औरङ्गज़ेब ने विश्वनाथजी का मन्दिर सन् १६६९ ई० में तोड़ा था; उसी समय कहा जाता है कि श्री विश्वनाथजी की मूर्ति मन्दिर से भाग ज्ञानवापी नामक कूप में (जो मन्दिर के पिछवाड़े है) कूद पड़ी। कलमा=मुसल्मानी मत का मुख्य मंत्र—'ला इलाह इल्लिल्ला मोहम्मद रसूलिल्लाः'।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि कुम्भकर्ण राक्षस के अवतार औरङ्गज़ेब ने मथुरा में कतले आम कराकर रव (दीन इसलाम) की दुहाई फिरवादी। देवी देवताओं की मूर्तियाँ खुदवा डाली, उत्तमोत्तम नगर और मुहल्ले बरबाद कर दिये, लाखों हिन्दुओं का सम्प्रदायिक मत छुड़वा उन्हें मुसलमान बना लिया। स्वयं काशीश्वर विश्वनाथ भी अपनी संसार व्यापिनी शक्ति

भूलकर (अर्थात् निःशक्त हो) भाग गये। यदि ऐसे समय शिवाजी न होते तो चारों वर्ण अपना २ धर्म त्याग मुसलमानी कराकर कलमा और नमाज़ पढ़ने लगजाते।

अलंकार—*संभावना, अन्तिम पद में।*

मूल—दावा पातसाहन सौं कीन्हों सिवराज बीर,
जेर कीन्हों देस हद बाँध्यो दरबारे से।
हठी मरहठी तामैं राख्यो न मवास कोऊ,
छीने हथियार डोलैं बन बनजारे से॥
आमिष अहारी मांसहारी दै दै तारी नाचैं,
खाँड़े तोड़े किरचैं उड़ाये सब तारे से।
पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे,
मुण्ड मतवारे गिरैं झुण्ड मतवारे से॥ २२॥

शब्दार्थ—हद बांध्यो दरबार से=दिल्ली के दरबार से अपनी न्यारी हद बाँधली। मवास=किला। बनजारे=व्यापारियों की एक जाति जो पहिले बैलों पर सामान लदकर एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में ले जाया करते थे। अब इस जाति के लोग खड़ियामिट्टी गेरू और कंघी बेचते हैं। आमिष अहारी मांस हारी=आमिष (कच्चा मांस) और पका मांस खाने वाले भूत, पिशाच आदि। खांडे=चौड़ी तलवार। तोड़=तोड़ेदार बन्दूक़, तथा तोड़कर। किरचैं=पतली तलवार, तथा टुकड़े-टुकड़े। तारे=तार, तारे। मुंड मतवारे=मुसल्मानी मत के गर्व में गर्वित तुर्कों के सिर।

अर्थ—वीरबर शिवाजी ने बादशाहों की बराबरी करने का हौसिला किया। समस्त देशों को ज़ेरकर (पराजितकर) अपने

राज्य की सीमा दिल्ली के दरबार से अलग ही बाँधली। हठी मरहठे (शिवाजी) ने उसमें (अपनी हद्द में) किसी अन्य का मवास (क़िला) नहीं रहने दिया (अर्थात् अपनी हद्द के सब क़िले अपने अधिकार में कर लिये) और सबके हथियार छीन लिये जिसके कारण वे (मुसल्मान शत्रु) जंगल में बनजारों की भाँति फिरने लगे (अथवा बनजारे बनकर फिरने लगे)। (रणस्थल में कच्चा पक्का हर तरह का) माँस-अहारी भूत पिशाच गण प्रसन्न हो ताली बजा-बजाकर नाचने लगे। मरहठों ने शत्रुओं के खाँडे, तोड़ेदार बन्दूकें और किरचैं तार के समान तोड़-मरोड़ डाली (अथवा मरहठों ने शत्रुओं के खाँडो को तोड़-ताड़ उनके किरचे-किरचे कर सबको तारों के समान इधर-उधर फैंक दिया)। पील (हाथी) के समान भारी-भारी डील (शरीर) वाले शत्रु पहाड़ की तरह भरभरा कर गिर पड़े, और (मुलसमानीधर्म से) उन्मत्त हुए पुरुषों के सिर कट-कट मदोन्मत्त पुरुषों के समूह की भाँति गिरने लगे।

अलंकार—*उपमा—'डौलैं बन बनजारे से'। छन्द के अन्तिम चरण में 'यमक'।*

सूचना—अमिष और मांस का एक ही अर्थ मानने पर यहाँ 'पुनरुक्ति' दोष है।

मूल—छूटत कमानन के गोली तीर बानन के,
मुसकिल होत मुरचान हूँ की ओट मैं।

ताही समै सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो,
दावा बाँधि परा हल्ला बीर भट जोट मैं ॥
'भूषन' भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं,
किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट मैं ।
ताव दै दै मूछन कँगूरन पै पाँव दै दै,
अरि मुख घाव दै दै कूदि परे कोट मैं ॥२३॥

शब्दार्थ—कमान=तोप । तीर=चलाना, छूटना (यहाँ तीर से तात्पर्य बाण से नहीं है) । मुरचा=वह स्थान जिस की आड़ में बैठ कर योधा गोली एवं तीर चलाते हैं । भटझोट=भट (योधा) समूह ।

अर्थ—जब मुसल्मानों की तोप, गोलियाँ और बानों के चलने पर मोरचों की आड़ में भी बचना कठिन हो रहा था, उसी समय महाराज शिवाजी ने अपने साथियों को आज्ञा देकर ऐसा प्रबल आक्रमण किया कि उससे शत्रु वीरों के मध्य बड़ा हुल्लड़ मच गया। भूषण कवि कहते हैं कि हे महाराज शिवाजी ! मैं आपके साहस का कहाँ तक वर्णन करूँ ? आपका महत्व प्रभाव आपके वीरगणों में भी इतना है कि वे उमंग से मूँछ मरोरते हुए कँगूरों पर चढ़ शत्रुओं को जख्मी करते हुए किले में कूद पड़े ।

अलंकार—*विशेषोक्ति—तोप, गोली, बानो के चलने पर भी शिवाजी ने धावा करदिया डरे नहीं । 'कारण' तोप गोली आदि होते हुए भी 'कार्य' बंद नहीं हुआ ।*

मूल—उतै पातसाह जू के गजन के ठट्ट छूटे,
उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन कारे हैं ।

इतै सिवराज जू के छूटे सिंहराज औ,
बिदारे कुम्भ करिन के चिक्करत भारे हैं ॥
फौजें सेख सैयद मुगल औ पठानन की,
मिलि इखलासखाँ हू मीरन सँभारे हैं ।
हद्द हिन्दुवान की विहद्द तरवारि राखि,
कैयो बार दिल्ली के गुमान झारि डारे हैं ॥२४॥

शब्दार्थ—घुमड़ि=इकट्ठे । सिंहराज=सिंहरुप वीरयोधा कुंभ=हाथी का मस्तक । इखलासखाँ=सन् १७२९ ई० में सलहेर के युद्ध में इखलास खाँ मुग़लों की ओर से सेनापति बनाया गया था ।

अर्थ—उधर जब बादशाह औरंगज़ेब के मतवाले हाथियों के झुण्ड-के-झुण्ड ऐसे चले, मानों काले-काले बदल इकट्ठे होकर उमड़ रहे हों । तो इधर से महाराज शिवाजी के सिंहरूपी वीर योधाओं ने छूट कर हाथियों के मस्तकों को वीदीर्ण कर डाला जिससे वे बड़े ज़ोर-ज़ोर से चिंघाड़ ने लगे । शेख, सैयद, मुग़ल और पठानों की फौजों को स्वयं सरदार इखलासखाँ भी नहीं सँभाल सका । महाराज शिवाजी ने अपनी महान तलवार के वल से कई बार दिल्ली का घमंड चूर कर हिन्दुओं की मर्यादा की रक्षा की ।

अलंकार—'गुप्तोत्प्रेक्षा' 'गजन के ठट्ट छूटे, उमडि घुमड़ि मतवारे घनकारे हैं', में । यहाँ "मानो" छिपा है ।

मूल—जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि,
सुनि असुरन के सुसीने धरकतु हैं ।

देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस
आजहूँ लौं परे खगदंत खरकत हैं ॥
कंटक कटक काटि कीट से उड़ाये केते,
'भूषन' भनत मुख मोरे सरकत हैं।
रन भूमि लेटे अधकेटे अरसेटे परे,
रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत हैं ॥२५॥

शब्दार्थ—असुरन=मुसल्मानों। खगदंत=तीरों के फल (गाँसियाँ)। खरकत=खटकती हैं, दुख देती। कंटक=काँटा, कंटक रूप शत्रु। अरसेटे=मुठभेड़ में आए हुए। पठनेटे=युवक पठान।

अर्थ—यह सुनकर कि 'शिवाजी ने सलहरे की लड़ाई में विजय पाई' मुसलमानों के कलेजे धड़कने लगते हैं। स्वर्ग, पाताल, और मृत्युलोक में शिवाजी का यशगान हो रहा है। और (शत्रुओं को) तीरों की गासियाँ अब भी दुख दे रही हैं। भूषण कवि कहते हैं कि शिवाजी ने शत्रुओं की सेना को काट-काटकर कीड़े-मकोड़ों की तरह उड़ा दिया और कितने ही पीठ दिखाकर चुप चाप लम्बे हो रहे है। रणभूमि में मुठभेड़ में आये हुए अध कटे पठान-युवक रुधिर में लथफत हुए पड़े फड़ फड़ा रहे हैं।

अलंकार—*यहाँ स, क, और ट, वर्ण की कई बार आवृति होने से 'वृत्यानुप्रास' है। 'कंटक कटक काटि कीट से उड़ाए' में 'उपमा'।*

मालती सवैया

मूल—केतिक देस दल्यो दल के बल
दच्छिन चंगुल चाँपि कै चाख्यो।
रूप गुमान हरयो गुजरात को,
सूरत को रस चूंसि कै नाख्यो॥
पंजन पेलि मलिच्छ मले सब,
सोई बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो।
सोरँग है सिवराज बली,
जिन नौरँग में रँग एकन राख्यो॥ २६॥

शब्दार्थ—दल्यौ=ध्वस्त किया, नष्ट किया। नाख्यो=नष्ट किया, फैंकदिया। सूरति=गुजरात में एक प्रसिद्ध नगर। इसे शिवाजी ने ५ वीं जनवरी सन् १६६४ ई० और १३ अक्टूबर सन् १६७० ई० में लूटा था। सोरँग है=वह रँग है, उसे रंग है (धन्य है), । नौरँग= भूषण कवि 'औरंगज़ेब' को नौरँग कहते थे।

अर्थ—शिवाजी ने कितने ही देश अपनी दल (सेना) के बल से ध्वस्त कर दिये। दक्षिण प्रान्ता को अपने चंगुल (पंजे) में चाँपि (दबा) उसे हड़प लिया। गुजरात की शोभा और घमंड (अथवा सुन्दरता के अभिमान) को नष्ट कर दिया और सूरत के रस अर्थात् वैभव को ले उसे खोखा कर त्याग दिया। समस्त मुसल्मानों को पंजों से पकड़-पकड़ कर रगड़ डाला, केवल जिसने दीनता स्वीकार की वही बचने पाया। महाबली शिवाजी को वह रंग है (अथवा उस शिवाजी को धन्य है

जिसने) कि औरंगज़ेब में एक भी रंग न रहने दिया (अर्थात् औरंगज़ेब की एक न चलने दी)।

अलंकार—काव्यलिंग। प्रथम, 'के तिक देशदल्यो', कहकर, 'दक्षिण, गुजरात, सूरत' आदिदेशों का पीछे से नामोल्लेख कर परिचय (अथवा समर्थन) कराया है।

सूचना—इस छन्द में ७ भगण (ऽ।।) और अन्त में दो गुरु ऽऽ वर्ण होते हैं। इसका दूसरा नाम 'मत्तगयन्द' भी है।

मूल—सूबा निरानँद बादरखाँन गे
लोगन बूझत ब्योंत बखानो।
दुग्ग सबै सिवराज लिये
धरिचारु विचारु हिये यह आनो॥
'भूषण' बोलि उठे सिगरे
हुतो पूना मैं साइतखान को थानो।
जाहिर है जग मैं जसवंत
लियो गढ़सिंह मैं गीदर बानो॥२७॥

शब्दार्थ—सूबा=सूबेदार। निरानँद बादरखाँन गे=बहादुर खाँ निरानँद गे, बहादुर खाँ निरानन्द हो गये (दुखी हो गये)। हुतो=थी। थानो=थान, अड्डा। जसवंत=जोधपुर नरेश महाराज जसवंत सिंहजी। इन्हों ने सिंहगढ़ को सन् १६६३ ई० में घेरा परन्तु कुछ किये न बना। गीदर बानो=सियार का काम, डरपोक पना।

अर्थ—सूबेदार बहादुरखाँ ने आनन्द रहित हो लोगों से पूछा कि अब कोई ब्योंत (उपाय) बताओ। परन्तु यह बात याद रखिए कि

शिवाजी ने सब अच्छे-अच्छे किले अपने आधीन कर लिए हैं। भूषण कवि कहते हैं कि इस पर सब लोग बोल उठे कि यह संसार में प्रसिद्ध है कि जब शाइस्तखाँ ने अपना अड्डा पूना में जमाया था और जोधपुर नरेश महाराज जसवंत-सिंह ने सिंहगढ़ को घेरा तो उन्हें शिवाजी के सन्मुख गीदड़ों की भाँति भागना पड़ा (फिर आपकी क्या गिनती है ?) ।

अलंकार—*काव्यार्थापत्ति । सूबेदार बहादुरखां के पूछने पर लोगों ने उत्तर दिया कि शाइस्तखाँ पूना में, और जसवंत सिंह सिंहगढ़ में रहे तब भी शिवाजी का कुछ न कर सके फिर आप क्या कर सकते हैं । यही काव्यार्थापत्ति है ।*

कवित्त मनहरण

मूल—जोरि कर जैहैं जुमिला हू के नरेस पर,
तोरि अरि खंड-खंड सुभट समाज पै ।
'भूषण' असाम रूम बलख बुखारे जैहैं,
चीन सिलहट तरि जलधि जहाज पै ॥
सब उमरावन की हठ कूरताई देखो,
कहैं नवरंगजेब साहि सिरताज पै ।
भीख मागि खैहैं बिन मनसब रैहैं पै न,
जैहैं हजरत महाबली सिवराज पै ॥२८॥

शब्दार्थ—जोरि कर=जोर लगाकर, हिम्मत करके । जुमिला=(फा०) सब जगह, गोलकुण्डे का मीर जुमला। सिलहट=आसाम का एक नगर, यहाँ की नारंगी प्रसिद्ध हैं। हठ कूरताई=मूर्खता पूर्ण हठ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि सरदारों का मूर्खता पूर्ण हठ देखने योग्य है, वे भय के कारण औरंगज़ेब से कहते हैं कि हम सब हिम्मत कर समस्त राजाओं पर चढ़ाई कर उनको विजय कर लेंगे (अथवा गोकलकुण्डे के मीरजुमले पर हम चढ़ जायँगे)। और समस्त शत्रु वीर समाज के भी टुकड़े २ कर डालेंगे। हम सब आसाम सिलहट, बलख, बुखारा तथा जहाज़ पर चढ़ समुद्र पार कर चीन और रूम (आदि देशों को विजय करने) चले जायँगे। हम बिना पदवी भीख माँग कर गुज़ारा कर लेंगे। परन्तु हे हजरत! हम उस प्रतापी शिवाजी के पास नहीं जायँगे।

अलंकार—*आक्षेप। यहाँ प्रथम सब उमरावों ने औरंगज़ेब से आसाम, रूम, बलख़ आदि देशों को तो जीतने जाना स्वीकार कर लिया; किन्तु शिवाजी पर चढ़ाई करने का निषेध किया है—(क्योंकि इस बात को उमराव भय से चाहते ही न थे), यही आक्षेप है।*

मूल—चंद्रावल चूर करि जावली जपत कीन्हीं,
मारे सब भूप औ सँहारे पुर धाय कै।
'भूषन' भनत तुरकान दल-थंभ-काटि,
अफजल मारि डारे तबल बजाय कै॥
एदिल सौं बेदिल हरम कहैं बार बार,
अब कहा सोवो सुख सिंहहि जगाय कै।
भेजना है भेजौ सो रिसालैं सिवराजजू की,
बाजी करनालैं परनालै पर आय कै॥ २९॥

शब्दार्थ—चंद्रावल=चन्द्रराव मोरे यह जावली के दुर्ग का अधिकारी था, इसे शिवाजी ने १७१२ वि० में हराया था दलथंभ=दलका थाँभने वाला, सेनापति । तबल=डंका । रिसालैं=खिराज, राज्यकर । करनालैं=तोपैं ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि बीजापुर के बादशाह आदिलशाह की बेगमें उदास मन हो उससे बार २ कहती हैं कि जिस शिवाजी ने चन्द्रराव मोरे को परास्त कर जावली को अपने अधिकार में कर लिया, और सब राजाओं को मार नगरों पर धावा कर उन्हें नष्ट कर डाला, और जिसने तुर्कों के सेनापतियों को कतलकर, डंके की चोट दे (अर्थात् खुल्लमखुल्ला) अफ़ज़लखाँ का वध किया; उसी शिवाजी रूपी सिंह को जगा कर (छेड़कर) अब आप कैसे सुख पूर्वक सो रहे हैं ? जो आपको ख़िराज भेजना ही है तो शीघ्र भेजिए क्यों कि उसकी तोपैं (आपके राज्यन्तर्गत) परनाले के दुर्ग पर छूटने लग गई हैं ।

अलंकार—छेकानुप्रास । च, ज, भ, ल, वर्णों की दो २ बार आवृत्ति है ।

मालती सवैया

साजि चमू जनि जाहु सिवा पर सोवत सिंह न जाय जगावो ।
तासों न जंग जुरौ न भुजंग महाविष के मुख मैं कर नावो ॥
'भूषन' भाषत बैरि-बधू जनि एदिल औरँग लौं दुख पावो ।
तासु सलाह कि राह तजौ मति नाह दिवाल की राह न धावो ॥३०॥

शब्दार्थ—नावो=नवाओ, झुकाओ, डालो । बैरि-बधू=शत्रु स्त्रियाँ । जनि=नहीं । नाह=नाथ, पति ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि शत्रु स्त्रियाँ अपने-अपने पतियों से कहती हैं कि चमू (सेना) सजा कर शिवाजी पर चढ़ाई करके क्यों सोते हुए सिंह को जगाते हो ? (अर्थात् शिवाजी को छेड़ना सोते सिंह को जगाना है अतः न जगाओ) उस से जंग (युद्ध) न करो; क्यों व्यर्थ ही महा विषधर सर्प के मुख में हाथ डालते हो (अर्थात् उस से लड़ना मानों साँप के मुख में हाथ डालना है, अतः ऐसा न करो) बीजापुर के बादशाह आदिलशाह और औरंगज़ेब की भाँति कष्ट में न पड़िए। हे नाथ ! उस से सलाह (मेल) करने का विचार न त्यागो, क्यों कि दीवार की राह पर जाना ठीक नहीं है (अर्थात् जान बूझ कर कुमार्ग में जाने पर दुख पाओगे।)

अलंकार—लोकोक्ति। *'सोवत सिंह न जाय जगावो' और 'दीवाल की राह न धावो', 'न भुजंग महाविषके मुख मैं कर नावो'; इन लोकोक्तियों का यहाँ प्रयोग हुआ है।*

छप्पय

मूल—बिज्जपुर बिदनूर सूर सर धनुष न संधहिं।
मंगल बिनु मल्लारि नारि धम्मिल नहि बंधहिं॥
गिरत गब्भ कोटै गरब्भ चिंजी चिंजा डर।
चालकुंड दलकुंड गोलकुंडा संका उर॥
'भूषन'प्रताप सिवराज तव इमि दच्छिन दिस संचरै।
मधुराधरेस धकधकत सो द्रविड़ निविड़ डर दबि डरै॥३१॥

शब्दार्थ—बिज्जपुर=बीजापुर। बिदनूर=बीजापुर की रियासत में एक नगर था जिसपर एक राजा शासन करता था। सन् १६७३ ई० में वह डर कर शिवाजी के आधीन होगया। मल्लारि=मालावार देश। धम्मिल=बालों की बनी हुई चोटी। गब्भ=गर्भ, हमल। कोटै गरब्भ=किले के गर्भ में, किले के भीतर। चिंजी चिंजा=लड़की, लड़का। चालकुंड='चाल' एक बंदरगाह है, इसके पास सन् १५३१ ई० में ईसाइयों ने एक किला बनाया था। दलकुंड='डल' काश्मीर में एक बड़ी झील है। मथुरा=मदुरा (मदरास प्रान्त में)। निबिड़=वना, बहुत।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे महाराज शिवाजी ! आपका प्रताप दक्षिण दिशा में ऐसा फैल गया है कि बीजापुर और बिदनूर के शूरवीर धनुष पर बाण नहीं चढ़ाते। मलाबार की शत्रुस्त्रियाँ मंगल(सौभाग्य) चिह्नहीन होजाने के कारण अपनी चोटियां भी नहीं बांधतीं (अर्थात् उन के बाल बिखरे ही रहते हैं)। कोट के भीतर सुरक्षित रहने पर भी भय के कारण शत्रु स्त्रियों के गर्भ के बच्चे बच्ची गिरजाते हैं। चाल-कुंड, दलकुंड (सम्भव है कि इस नाम का पहिले कोई स्थान दक्षिण में हो) और गोलकुंडा के लोगों के हृदय भयभीत रहते हैं ! मदुरा का राजा काँपता रहता है और द्रविड़लोग महाभय के मारे छिपे ही रहते हैं।

अलंकार—छेकानुप्रास और वृत्यानुप्रास। वि, स, ध, म, ग, च, ड, और ल, वर्णों की यहाँ क्रमशः दो २ वार आवृति हुई है,

अतः छेकानुप्रास है । अन्तिम पद में 'ध' वर्ण की कई वार आवृति होने से वृत्यानुप्रास है ।

सूचना—इस छंद के आदि में रोलाछंद के चार पद चौबीस-चौबीस मात्राओं के रखे जाते हैं फिर अन्त में उछाला छंद के दो पद छब्बीस-छब्बीस मात्राओं के रखते हैं । इस प्रकार यह छः पदों का छप्पय होता है ।

कवित्त-मनहरण

मूल—अफ़ज़ल खान को जिन्होंने मयदान मारा,
बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है ।
'भूषन' भनत फरासीसीत्यौं फिरंगी मार,
हबसी तुरुक डारे पलटि जहाज है ॥
देखत मैं खानरुसतम जिन खाक किया,
सालति सुरति आजु सुनी जो अवाज है ।
चौंकि चौंकि चकत्ता कहत चहुँधा ते यारो,
लेत रहौ खबरि कहाँ लौं सिवराज है ॥३२॥

शब्दार्थ—फरासीसी त्यों फिरंगी मारि=फ़रासीसियों की भाँति ही पुर्तगाल वालों को परास्त कर; सूरत नगर को लूटते समय फरासीसियों और पुर्तगालियो ने कुछ छेड़ छाड़ की और शिवाजी की पहिली चढ़ाई के समय सूरत के मुग़ल सूबेदार अंग्रेज़ों ने तोपों की बड़ी मदद की थी । इसी बात पर शिवाजी ने उनकी बस्तियाँ लूट लीं । सालति=खटकती है, दुखती है ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि औरंगज़ेब चौंक-चौंक कर अपने सरदारों से कहता है कि जिसने अफ़ज़लखाँ को सरे मैदान

कतल कर डाला, और हाल ही में जिसने बीजापुर और गोलकुंडा को पराजित किया है, जिसने फरासीसियों की भाँति ही फिरंगियों को पछाड़ दिया, और जिसने देखते-देखते (अर्थात् बात की बात में) रुस्तमेजमाखाँ को मिट्टी में मिला दिया और जिसकी आवाज आज सुन कर मुझे उसकी (रुस्तेमेंजमाखाँ की) याद बड़ा कष्ट दे रही है (अथवा जिसकी आवाज आज भी मुझे कष्ट दे रही है), हे मित्रो ! तुम उस शिवाजी का पता चारों ओर को लगाते रहो कि वह कहाँ तक आगया है।

अलंकार—*स्वभावोक्ति। यहाँ औरंगजेब की भयजनित स्वाभाविक दशा का वर्णन है।*

मूल—फिरंगाने फिकिरि औ हदसनि हबसाने,
'भूषन' भनत कोऊ सोवत न घरी है।
बीजापुर-बिपति बिडरि सुनि भाजे सब,
दिल्ली दरगाह बीच परी खरभरी है॥
राजन के राज सब साहन के सिरताज,
आज सिवराज पातसाही चित धरी है।
बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार,
धाम धाम-धूम धाम रूम साम परी है॥३३॥

शब्दार्थ—फिरंगाने=फिरंगियों का देश, फ्रांस, इंगलैंड, पुर्तगाल आदि। मिश्र बन्धुओं के मतानुसार बाबर के पिता का राज्य। हदसनि=भय, (फा० हदसाने से)। हबसाने=हबसीलोगों का देश, यहाँ तात्पर्य जंजीरा के टापू से है, इसी के साथ-साथ सारा

पश्चिमी घाट का समुद्री किनारा इन हबसी मुसल्मान सरदारों के अधिकार में था)। दिल्ली दरगाह=दिल्ली दरबार। पात साही चित धरी=साम्राट होने की इच्छा की।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि फिरंगी चिंता के मारे और जंजीरा वासी हबसी सिद्दी भय के कारण रात में घड़ी भर भी नहीं सोते। बीजापुर की विपत्ति का हाल सुनकर सब लोग डर कर भाग गये हैं। और दिल्ली के दरबार में भी हलचल मची हुई है। राजाधिराज बादशाहों में शिरोमणि महाराज शिवाजी ने आजकल सम्राट होने की इच्छा की है। इसी से बलख, बुखारा काश्मीर, रूम और स्याम आदि देशों में घर २ बड़ी भारी चिल्लाहट पड़ रही है (कि हाय! अब हम क्या करें ? शिवाजी हमें भी परास्त कर, लूटेगा)।

अलंकार—अनुप्रास। यहाँ फ, ह, भ वर्णों की दो बार आवृति होने से छेकानुप्रास है। पुनः ब, ज, और ध की कई बार आवृति होने से वृत्यानुप्रास है।

मूल—गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर,
दावा नाग जूह पर सिंह सिरताज को।
दावा* पुरहूत को पहारन के कुल पर,
पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को॥

---

*पुराणों में ऐसा लिखा है कि पहिले पहाड़ों के पंख थे और वे उड़ते थे। इस हेतु पहाड़ों के अत्याचारों से दुखी हो देवताओं ने इन्द्रसे प्रार्थना की। इन्द्र ने अपने वज्र से उनके पंख काट डाले। तब से इन्द्र को 'पर्वतारि' भी कहते हैं।

भूषन अखंड नवखंड महिमंडल मैं,
तम पर दावा रवि किरन समाज को।
पूरब पछांह देस दच्छिन ते उत्तर लौं,
जहाँ पातसाही तहाँ दावा सिवराज को॥३४॥

शब्दार्थ—नाग जूह=हथियों का झुंड। पुरहूत=इन्द्र। किरण समाज=किरण समूह।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि जैसे गुरुड़ का सदां नाग (सर्पों) के झुण्ड पर, महावली सिंह का हाथियों के समूह पर, इन्द्र का पर्वतों पर, बाज का सदां पक्षी-संघ पर और सूर्य की किरणों का नवद्वीप और सारी पृथ्वी के अंधकार समूह पर स्वत्व है; उसी प्रकार महाराज शिवाजी का पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण तक जहाँ २ बादशाही है वहाँ २ अधिकार है।

अलंकार—*निदर्शना। यहाँ गरुड़, सिंह, पुरहूत, बाज और रवि सम्बन्धी वाक्यों के क्रमशः भिन्न होते हुए भी इनकी समानता 'शिवाजी सम्बन्धी वाक्य' से 'दावा' गुण द्वारा प्रकट की है।*

मूल—दारा की न दौर यह रारि नाहिं खजुवे की,
बाँधिबो नहीं है किधौं मीर सहवाल को।
मठ विश्वनाथ को न बास ग्राम गोकुल को,
देवी को न देहरा न मंदिर गोपाल को॥
गाढ़े गढ़ लीन्हें और बैरी कतलाम कीन्हें,
ठौर ठौर हासिल उगाहत है साल को।

वूड़ति है दिल्ली सो सँभारै क्यों न दिल्लीपति,
धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को ॥३५॥

शब्दार्थ—खजुवे=जिला फतेहपुर में बिन्दी के निकट खजुवा एक गाँव है। यहाँ शाहशुजा को औरंगज़ेब ने हराया था। मीर सहबाल= शाहबाज खाँ नामक सरदार; लाल कवि ने इसका नाम अपने छत्र प्रकाश में लिखा है। परन्तु इसका इतिहास में नाम नहीं मिलता। देहरा=देवालय, मन्दिर। हासिल=खिराज। साल को=वर्ष का, सालाना।

अर्थ—यह दारा के ऊपर धांवा नहीं है और न यह खजुवा की लड़ाई है। यह सरदार शाहबाज खाँ को वन्दी कर लेना भी नहीं है और न यह विश्वनाथजी का मन्दिर गिरा देना है, न गोकुल में अड्डा जमाना, देवी और श्री गोपालजी के मन्दिर को तोड़ना ही है। यह महाराज शिवाजी बड़े २ दृढ़ किलों को जीतता, शत्रुओं को कतल करता और स्थान २ से सालाना खिराजा उगाहता हुआ आरहा है। हे दिल्लीश्वर! अब यह तुम्हारी दिल्ली डूबने वाली है (अर्थात् अब दिल्ली का नाश होने वाला है) इसे सँभालना है तो सँभालो क्योंकि महाकाल रूप शिवाजी का इस पर धक्का आ लगा है (अर्थात् शिवाजी ने अब दिल्ली पर धावा किया है अगर तुम्हें इसे बचाना है तो इसे बचाओ)।

अलंकार—आक्षेप। *यहाँ भी पहिले 'दारा की न दौर' आदि बातें निषेध कहकर आक्षेप किया है।*

मूल—गढ़न गँजाय गढ़धरन सजाय करि,
छाँड़े केते धरम दुवार दै भिखारी से।
साहि के सपूत—पूत बीर सिवराज सिंह,
केते गढ़धारी किये बन बनचारी से॥
'भूषन' बखानै केते दीन्हें बन्दी खाने सेख,
सैयद हजारी गहे रैयत बजारी से।
महता से मुगुल महाजन से महाराज,
डाँडि लीन्हें पकरि पठान पटवारी से॥३६॥

शब्दार्थ—गँजाय=गँजन कर, नष्टकर, तोड़ फोड़। सजाय करि=सजा दे, दण्ड देकर। हजारी=पंच हजारी, हफ्त हजारी पद वाले। बाजारी=तेली, तमोली आदि। महता=महतौं गाँव के मुखिया, नाजिम के समान पदाधिकारी; उदयपुर में अब भी 'महता' पद एक उच्च पद माना जाता है।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि साहजी के श्रेष्ठ पुत्र महाबली महाराज शिवाजी ने शत्रुओं के किलों को तोड़कर उनके किलेदारों को दण्डित कर दिया और कितने ही को धर्म समझ कर (अथवा धर्मशाला में आश्रय बतला कर) भिक्षुकों की भाँति चले जाने दिया। कितने ही राजाओं को वनमें फिरने वाले कोल और भीलों के समान (दीन) बना डाला और कितनों को जेल खाने में डालदिया। पंच हजारी सेख सैयद मुसलमान मामूली बाजारी लोग तेली तमोली की भाँति फिर रहे हैं। मुग़ल (शाही ख़ानदान के मुसल्मान) महतों की तरह,

मूल—गढ़न गँजाय गढधरन सजाय करि,
छाँड़े केते धरम दुवार दै भिखारी से।
साहि के सपूत—पूत बीर सिवराज सिंह,
केते गढ़धारी किये बन बनचारी से॥
'भूषन' बखानै केते दीन्हें बन्दी खाने सेख,
सैयद हजारी गहे रैयत बजारी से।
महता से मुगुल महाजन से महाराज,
डाँडि लीन्हें पकरि पठान पटवारी से॥३६॥

शब्दार्थ—गँजाय=गँजन कर, नष्टकर, तोड़ फोड़। सजाय करि=सजा दे, दण्ड देकर। हजारी=पंच हजारी, हफ्त हजारी पद वाले। बाजारी=तेली, तमोली आदि। महता=महतौं गाँव के मुखिया, नाजिम के समान पदाधिकारी; उदयपुर में अब भी 'महता' पद एक उच्च पद माना जाता है।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि साहजी के श्रेष्ठ पुत्र महाबली महाराज शिवाजी ने शत्रुओं के किलों को तोड़कर उनके किलेदारों को दण्डित कर दिया और कितने ही को धर्म समझ कर (अथवा धर्मशाला में आश्रय बतला कर) भिक्षुकों की भाँति चले जाने दिया। कितने ही राजाओं को वनमें फिरने वाले कोल और भीलों के समान (दीन) बना डाला और कितनों को जेल खाने में डालदिया। पंच हजारी सेख सैयद मुसलमान मामूली बाजारी लोग तेली तमोली की भाँति फिर रहे हैं। मुग़ल (शाही ख़ानदान के मुसल्मान) महतों की तरह,

बड़े २ महाराज बनियों की भाँति पठान पटवारियों के समान पकड़ लिये गये और उनसे जुर्माना ले लिया।

अलंकार—पूर्णोपमा। *'गढधरन भिखारी से छाडे', गढधारी 'वन-चारी से किये', 'सैयद गहे वन-वन जारी से', 'और डाँड लीने पठान पटवारी से'* आदि पदों में पूर्णोपमा स्पष्ट है।

मूल—सक्र जिमि सैल पर अर्क तम फैल पर,
बिघन की रैल पर लंबोदर लेखिये।
राम दसकंध पर भीम जरासंध पर,
'भूषन' ज्यों सिंधु पर कुंभज बिसेखिये॥
हर ज्यों अनंग पर गरुड़ भुजंग पर,
कौरव के अंग पर पारथ ज्यों पेखिये।
बाज ज्यों बिहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर,
म्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिये॥२७॥

शब्दार्थ—सक्र=इन्द्र। अर्क=सूर्य। तम फैल=अंधकार राशि। लंबोदर=गणेशजी। कुंभज=अगस्त्य मुनि जिन्होंने समुद्र पी लिया था। ये घड़े से पैदा हुए थे। बिसेषिये=विशेष कर जानिये। अनंग=कामदेव।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि जिस भाँति इन्द्र सैल (पर्वतों) को सूर्य अन्धकार राशि को और गणेशजी विघ्नरेल (समूह) नष्ट करते हैं। जैसे भगवान् राम ने रावण पर, भीम ने जरासंध पर, शिवजी ने कामदेव पर, अगस्त्य मुनि ने समुद्र पर, गरुड़ ने सर्पों पर और अर्जुन ने कौरव पक्ष पर अपना

प्रभाव प्रकट किया (अर्थात् उन्हें नष्ट कर दिया)। और जैसे बाज पक्षियों के गोल को और सिंह हाथियों के झुंड को नष्ट करता है उसी भाँति शिवाजी महाराज मुसलमानों की चतुरंगिनी सेना को तहश-नहश करने वाले हैं।

अलंकार—*मालोपमा। यहां 'शिवाजी' उपमेय के 'सक्र, अर्क, लंबोदर' आदि कई उपमान कथन किये गये हैं।*

मूल—बारिध के कुंभभव घनबन दावानल,
तरुन * तिमिरहू के किरन समाज हौ।
कंस के कन्हैया कामधेनुहू के कंटकाल,
कैटभ के कालिका विहंगम के बाज हौ॥
'भूषन' भनत जग जालिम के सची पति,
पन्नग के कुलके प्रबल पच्छिराज हौ।
रावन के राम कार्तवीज के परसुराम,
दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ ॥३८॥

शब्दार्थ—कुंभभव=कुंभ से उत्पन्न हुए, अगस्त्यमुनि। तरुन तिमिर=घोर अंधकार। किरन समाज=किरण समूह, सूर्य। जग जालिम=संसार में अत्याचार करने वाला वृत्रासुर नामका राक्षस। इसी का दूसरा पाठ 'जम जालिम' भी है, इसका अर्थ—यम के समान अत्याचारी वृत्रासुर

---

* इस पाठ के अतिरिक्त 'तरन' पाठ भी मिलता है जो निरर्थक है इस स्थान पर 'तरनि' शब्द विशेष उचित है। तरनि पाठ रखने पर इस प्रकार अन्वय होगा—'तिमिरहू के तरनि किरन समाज हौ'=(अंधकार के लिये सूर्य की किरण समूह हो।

नाम का राक्षस । सची पति=इन्द्र । पन्नग=सर्प । कार्तवीज= कार्तवीर्य=सहस्राबाहु अर्जुन, इसने परशुराम के पिता जमदग्नि को निरापराध मारडाला था। इसी का बदला चुकाने को परशुरामजो ने इसे और इसके वंशवालों का इक्कीस बार संहार किया ।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि यदि औरंगज़ेब समुद्र रूप है, तो आप उसके लिये अगस्त्य मुनि हैं; यदि वह बड़ा गहन बन है, तो आप उसके भस्म करने वाले दावानल हो; यदि वह घोर अन्धकार रूप है, तो आप उसका नाश करने वाले सूर्य हो यदि वह कंसरूप है, तो आप उसके संहार कर्ता श्री कृष्ण हो; यदि वह कामधेनु रूप है, तो आप उसके लिये काँटों का घर हो; यदि वह कैटभ रूप है, तो आप उसके लिए कालिका हो; यदि वह पक्षी है, तो आप उसके घातक बाज़ हो; यदि वह संसार में अत्याचार करने वाला वृत्रासुर रूप दैत्य है, तो आप उसके नाशकर्ता इन्द्र हो; यदि वह सर्प रूप है, तो आप उसके भक्षक पक्षिराज (गरुड़) हो; यदि वह रावण है, तो आप उसके संहार कर्ता राम हो; यदि वह सहस्राबाहु अर्जुन रूप है, तो आप उसके लिये परशुराम के अवतार हो। हे महाराज शिवाजी! दिल्लीपति औरंगज़ेब रूपी हाथी के लिये आप सिंह के समान हो।

अलंकार—*समअभेद रूपक । यहाँ शिवाजी में अगस्त्य मुनि दावानल, सूर्य, कृष्ण, इन्द्र तथा सिंह का अभेद आरोप*

किया है । दिल्ली पति औरंगज़ेब में वारिधि, वन, तम, वृतासुर दिग्गज आदि का अभेद आरोप है ।

मूल—दरबर दौरि करि नगर उजारि डारे,
कटक कटायो कोटि दुजन दरब की ।
जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर,
चलै न कछूक अब एक राजा रब की ॥
सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुव कंप,
थर थर काँपति बिलायत अरब की ।
हालत दहलिजात काबुल कंधार बीर,
रोस करि काढ़ै समसेर ज्यों गरब की ॥३९॥

शब्दार्थ—दर=दल, सेना । दुजन दरब की=दुर्जनों की द्रव्य से इकट्ठी की हुई । समसेर=फा० शमशेर, तलवार । गरब=फा० मग़रिब, पश्चिम ।

अर्थ—आपने अपनी सेना के बल से नगरों को उजाड़ कर करोड़ों दुष्ट (मुसलमानों) की द्रव्य से इकट्ठी की हुई सेना को काट डाला । आप संसार भर में महाबली एवं जंग जालिम (युद्ध में बड़ी भारी मारकाट करने वाले) प्रसिद्ध हो । अब आपके सामने किसी भी राजा एवं मुसलमान रईस की कुछ पेश नही चल सकती । हे बीर शिवाजी ! आपके भय के कारण दिल्ली में भूडोल सा प्रकट हो गया और अरब की बादशाहत भी थर २ काँपती रहती है । जब आप क्रोधित हो म्यान से तलवार खेंचते हो तब काबुल, कंधार आदि मुसलमानी पश्चिमी सल्तनतें काँप उठती हैं ।

अलंकार—अतिशयोक्ति । यहाँ शिवाजी की वीरता से दूर देशों की सल्तनतों का काँप उठना कथन कर अतिशयोक्ति की है।

मूल—'सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों,
कहत बारबार' कहि पातसाह गरजा।
सुनिये 'खुमान हरि तुरुक गुमान महि-
देवन जेंवायो' कवि 'भूषन' यों अरजा॥
तुम वाको पाय कै जरूर रन छोरो वह,
रावरे वजीर छोरि देत करि परजा।
मालुम तिहारो होत याहि मैं निबेरो रन,
कायर सो कायर औ सरजा सो सरजा॥४०॥

शब्दार्थ—महिदेवन=ब्राह्मणों को । अरजा=अ० अरज़ की, कहा। खुमान=चिरंजीव।

अर्थ—भूषण कवि से औरंगज़ेब ने गर्ज कर पूछा कि तुम बार २ शिवाजी की प्रशंसा और हमारी बुराई क्यों किया करते हो? इसपर भूषण कवि ने इस भाँति निवेदन किया कि सुनिये! खुमान (चिरंजीव शिवाजी) ने तुर्कों का घमंड चूर कर ब्राह्मणों को भोजन कराकर बड़ा यश लिया है। तुम उसके सामने भय से जुरूर रणस्थल त्याग देते हो परन्तु वह तुम्हारे वज़ीरों को पकड़ कर भी उन्हें प्रजा की भाँति छोड़ देता है। बस इसी से निर्णय होजाता है कि जो युद्ध में कायर हैं वह कायर ही है और जो सिंह हैं वह सिंह (वीर) ही है (अर्थात् तुम कायर हो और शिवाजी वीर है)।

अलंकार—*प्रश्नोत्तर, तथा प्रमाण। यहाँ कवित्त के प्रथम चरण में औरगज़ेब का 'प्रश्न' और भूषण जी का 'उत्तर' है, अतः प्रश्नोत्तर है। अन्तिम चरण में कायर और वीर का प्रमाण मिला है, यही प्रमाण है।*

मूल—कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के,
एकै पातसाहन के देस दाहियतु है।
'भूषन' भनत महाराज सिवराज एकै,
साहन की फौज पर खग्ग बाहियतु है॥
क्यों न होहिं बैरिन की बौरी सुनि बैर बधू,*
दौरनि तिहारे कहौ क्यों निबाहियतु है।
रावरे नगारे सुनि बैरवारे नगरनि,
नैनवारे नदन निवारे चाहियतु है॥४१॥

शब्दार्थ—दाहियतु=जलाते हो। खग्ग=तलवार। बौरी=पागल। सुनिबैर बधू=स्त्रियाँ बैर (शिवाजी से) सुन। दौरनि=आक्रमण। नदन=बड़ी २ नदियाँ। निवारे=बड़ी नावें।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे महाराज शिवाजी ! आप किसी बादशाह के किले ढहाते हो, किसी के देशों को जला कर भस्म करते हो और किसी बादशाह की सेना पर तलवार चलाते हो। शत्रुओं की स्त्रियाँ आप से बैर सुनकर क्यों न

---

*इसका दूसरा पाठ 'बरबधू' भी है। जिसके होने पर 'शत्रुओं की सुन्दर स्त्रियाँ तुम्हारे आक्रमण को सुनकर क्यों न पगली हों ?' यह अर्थ होगा।

पागल हों ? (अर्थात् वे अवश्य पागल होती हैं)। भला वे बेचारी आपके आक्रमण को कैसे सहन कर सकती हैं। जबकि आपके नगारों की ध्वनि को ही सुनकर शत्रु नगर वासियों के नेत्रों के जल से ऐसी बड़ी २ नदियाँ निकलती है कि जिन्हें पार करने को बड़ी नौकाओं की आवश्यकता होती है।

अलंकार—*अतिशयोक्ति और अप्रस्तुत प्रंशसा। यहाँ कवित्त के अन्तिम चरण—'रावरे नगारे सुनि बैरवारे नगरन नैनवारे नदन निवारे चाहियतु हैं, में सुनने मात्र से शत्रुओं के नगरों में स्त्रियों के नेत्र जल से उत्पन्न हुई नदियों के लिये नावों की आवश्यकता ही अतिशयोक्ति है।*

शत्रुओं की स्त्रियों के नेत्रजल से बनी नदी के लिये नाव रूप अप्रस्तुत वस्तु वर्णन से प्रस्तुत शिवाजी की प्रताप प्रशंसा ही 'अप्रस्तुत प्रशंसा' है।

मूल—चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै बार-बार,
दिल्ली दहसति चितै चाह करपति है।
बिलखि बदन बिलखात बिजैपुरपति,
फिरति फिरंगिनि की नारी फरकति है॥
थर थर काँपत कुतुब साह गोल कुण्डा,
हहरि हबस भूप भीर भरकति है।
राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि,
केते पातसाहन की छाती दरकति है॥४२॥

शब्दार्थ—दहसति=दहशत, भय। बिलखि बदन=उदासीन मुख। बिलखात=रोते हैं, शोक प्रकट करते हैं। हहरि=भयभीत होकर। भरकति=भड़कती है, डर कर भागती है।

अर्थ—शिवाजी के नगारों की ध्वनि के आतंक से औरंगज़ेब चकित हो बार बार चौंक उठता है। भयभीत दिल्ली निवासियों के चित सदा शिवाजी के समाचारों की ओर आकर्षित (खिंचे) रहते हें। बीजापुर का बादशाह उदास मुख किये शोक करता रहता है। भय से इधर उधर फिरने वाले अंग्रेज़ों की नाड़ियां फड़कती रहती हैं। गोलकुंडा का बादशाह कुतुबशाह थर २ कांपता रहता है और जंजीरा के हब्शी राजागण भी डर कर भाग जाते हैं। महाराज शिवाजी के नगारों की धाक से कितने ही बादशाहों की छातियां फटने लगती हैं।

अलंकार—*अतिशयोक्ति। यहाँ कवित्त के अन्तिम चरण में शिवाजी के नगारों की धाक सुनकर पातशाहों की छाती फटने के वर्णन में अतिशयोक्ति है।*

मूल—मौरंग कुमाऊँ औ पलाऊ बाँधे एक पल,
कहाँ लौं गिनाऊँ जेऽब भूपन* के गोत हैं।
'भूषन' भनत गिरि बिकट निवासी लोग,
बावनी बवंजा नवकोटि धुन्ध जोत हैं॥

---

*जिन प्रतियों में 'भूपन' के स्थान में भूषन लिखा है, वह अशुद्ध है।

काबुल कंधार खुरासान जेर कीन्हों जिन,
मुगल पठान सेख सैयदहु रोत हैं।
अबलग जानत हे बड़े होत पातसाह,
सिवराज प्रगटे ते राजा बड़े होत हैं ॥४३॥

शब्दार्थ—मौरंग कुमाऊँ=मोरभंज या मुरंजन का क़िला जो कोकण प्रान्त में था। कुमाऊँ गढ़वाल की रियासत को कहते हैं, यहाँ एक बार भूषण जी गये थे। पलाऊ='पला' नामक एक ग्राम यमुना जी के किनारे था। बावनी बवंजा=उत्तर पश्चिमी बोली में बावन को बवंजा भी कहते हैं। बावनी बुंदेल खण्ड में एक मुसल्मानी रियासत है। अथवा वर्तमान बरार प्रान्त। नवकोटि=नवकोट मारवाड़ प्रान्त में है। धुंधजोत=तेजहत।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि महाराज शिवाजी ने मौरंग, कुमाऊँ और पलाऊ राज्यों के राजाओं को पलभर में बांध लिया। और कितने ही राजाओं के गोत (समूह) को परास्त कर दिया जिनका कि अब गिनना कठिन है। बड़े २ भयंकर पर्वतों के रहने वाले, बावनी बवंजा और नव कोटि (मारवाड़) के बासी भी जिनके सन्मुख तेज हत होगये हैं। जिनने काबुल, कंधार और खुरासान को पराजित करदिया; और जिसके मारे मुगल, पठान, सेख और सैयद भी रोते रहते हैं। ऐसे पराक्रमी वीर शिवाजी के प्रकट होने से ही आज समझ में आगया कि राजा ही बड़े होते हैं वरना अबतक सब बादशाहों को ही बड़ा मानते थे।

अलंकार—*प्रमाण। अबलग जानते हे बड़े होत पातसाह, सिवराज प्रगटे ते राजा बड़े होते हैं'; यहाँ राजा बड़े होने का प्रमाण है।*

मूल—दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी,
*उग्ग नाचे डग्ग पर रुँड मुण्ड फरके।
'भूषन' भनत बाजे जीत के नगारे भारे,
सारे करनाटी भूप सिंहल को सरके॥
मारे सुनि सुभट पनारे वारे उद्‌भट,
तारे लगे फिरन सितारे गढ़धरके।
बीजापुर बीरन के, गोलकुण्डा धीरन के,
दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके॥४४॥

शब्दार्थ—दुग्ग=दुर्ग, किला। उग्ग=(उग्र) शिवजी। डग्ग=डगर, मार्ग। कारनाटी=करनाटक, इस स्थान पर शिवाजी ने सन् १६७६–७८ ई० में आक्रमण किया। तारे लगे फिरन=तारे फिरने लगे, नक्षत्र पलटने लगे, भाग पलटने लगा।

---

*इस स्थान पर भिन्न-भिन्न प्रतियों में भिन्न-भिन्न पाठ मिलते हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से प्रकाशित शिवा बावनी में 'उग्ग पर उग्ग नाचे' पाठ लिखा है और उसमें 'उग्ग' का अर्थ आकाश मंडल माना है। मेरी समझ में उग्ग (उग्र) का अर्थ 'आकाश मण्डल' अशुद्ध है। शब्द पारिजात, शब्द सागर और विश्व कोशादि में भी यह अर्थ नहीं मिलता मिश्रबन्धु सम्पादित भूषण ग्रंथावली में 'डग्ग नाचे डग्ग पर रुंड मुंड फर के' यह पाठ है। इसका अन्वय इस भाँति है—रुंड डग्ग पर डग्ग नाचे मुंड फरके; अर्थ—कबंध पग-पग पर नाचते (दौड़ते) थे और मुंड फड़कते थे।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि धर्म वीर शिवाजी ने क़िले पर क़िले विजय कर लिये। ऐसा घोर युद्ध किया कि शिवजी (प्रसन्न हो) मार्ग में नाचने लगे और अनेकों रुण्ड और मुण्ड फड़कने लगे। जब विजय के बड़े २ नगारे बजाये गये तब सारे करनाटकदेश के राजा भय के कारण सिंहलद्वीप (लंका) की ओर चुपचाप भागने लगे। बड़े उद्भट (प्रचण्ड) वीर परनाले वाले योधाओं का मारा जाना सुनकर सितारे वाले महाराज शिवाजी का भाग पलटने लगा। और बीजापुर, गोलकुण्डा और दिल्ली के शूर वीर एवं अमीरों के हृदय दाड़िम (अनार) की भाँति फटने लगे।

अलंकार—*पूर्णोपमा । 'दिल्ली' उर मीरन के दाड़िम से दरके, में, 'उर' उपमेय, 'दाड़िम' उपमान, 'से' वाचक, 'दरके' धर्म है। अतः पूर्णोपमा ।*

मूल—मालवा उजैन भनि 'भूषन' भेलास ऐन,
सहर सिरोज लौं परावने परत हैं।
गोंड़वानो तिलँगानो फिरँगानो करनाट,
रुहिलानो रुहिलन हिये हहरत हैं॥
साहि के सपूत सिवराज तेरी धाक सुनि,
गढ़पति वीर तेऊ धीर न धरत हैं।
बीजापुर गोलकुण्डा आगरा दिली के कोट,
बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं॥३५॥

शब्दार्थ—भेलास=गवालियर राज्यान्तर्गत एक नगर, इसमें प्राचीन

बौद्ध स्तूप बहुत हैं। ऐन=(अ०) ठीक। सिरोज=इस नाम का एक शहर बुंदेल खण्ड में था, अथवा शीराज। गोड़वानो=जहाँ गोंड रहते थे, मध्यप्रदेश।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे साहजी के सुपुत्र महाराज शिवाजी! आपके आतंक से मालवा, उज्जैन, भेलसा और ठीक शीराज नगर (फारस में एक प्रसिद्ध नगर) तक लोगों में भगदड़ पड़ रही है। गोंडवाल, तैलंग, तथा यूरुप में खलबली मच गई है। करनाटकी और रुहेलखण्ड के रुहेलों के हृदय बड़े घबड़ा रहे हैं। बड़े २ वीर दुर्गाधीशों का धैर्य भी छूट गया। डरके कारण बीजापुर, गोलकुण्डा और दिल्ली के किलों के दरवाजे किसी किसी दिन ही खोले जाते हैं।

अलंकार—*अत्युक्ति। 'बीजापुर गोलकुंडा आगरे दिल्ली के कोट बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं' में किलों के दरवाजों का कभी २ खुलना अत्युक्ति है।*

मूल—मारि करि पातसाही खाकसाही कीन्हीं जिन,
जेर कीन्हों जोर सों लै हद्द सब मारे की।
खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई,
सब हिसि गई हिम्मत हजारों लोग सारे की॥
बाजत दमामे लाखों धौंसा आगे घहरात,
गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़े भारे की।
दूलहो सिवाजी भयो दच्छिनी दमामे वारे,
दिल्ली दुलहिनि भई सहर सितारे की॥४६॥

शब्दार्थ—खाक साही=(फा०) खाक सियाह, भस्म, राख। हद्द सब मारे की=सब हद्द मारे की, जो हद्द (राज सीमाएँ) मार में थी अर्थात् राज के जिन भागों को शत्रुओं ने दबा रखा था। खिसगई=खिसक गई, गिर गई, नष्ट होगई। फिसगई=फिस्स होगई, हवा निकल गई, नष्ट होगई। हिसगई=फा० (हिस्तन= छूटना) छूटगई, नष्ट होगई।

अर्थ—जिन्होंने बादशाहत को नाश कर उसे खाक में मिला दिया, समस्त देश को परास्त कर (अन्य राजाओं की) सीमाओं को नष्ट कर डाला या अपनी दबी सीमा वापिस ली। जिसके सम्मुख हज़ारों लोगों की शेखी वीरता और हिम्मत सब हवा हो गई (नष्ट हो गई), उन्हीं शिवाजी के सामने ये दमामे (नगारे) और धौंसे बज रहे हैं, जो ऐसे घहरा रहे हैं जैसे कि मेघ गर्ज रहे हों। यह शिवाजी की सेना किसी बड़े आदमी की बरात है, उसके शिवाजी दूल्हे हैं दक्षिणी (मरहट्ठे) लोग दमामें बजाने वाले हैं और 'दिल्ली' सितारे शहर की दुलिहिन है।

अलंकार—*अनुप्रास और रूपक। पातसाही, खाकसाही; खिसि फिसि, हिसि, में, वृत्यानप्रास। शिवाजी में, दूल्हे का, सेना में बरात का दाक्षिणी वीरो में दमामे बजानेवालों का और दिल्ली में दुलहिन का आरोप किया गया है, अतः सांगरूपक है।*

मूल—डाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी सी रहत छाती,
बाढ़ी मरजाद जस हद्द हिन्दुवाने की।

कढ़ि गई रैयत के मन की कसक सब,
मिटि गई ठसक तमाम तुरकाने की ॥
भूषन भनत दिल्लीपति दिल धकधका,
सुनि सुनि धाक सिवराज मरदाने की ।
मोटी भई चंडी बिन चोटी के चबाय सीस,
खोटी भई सम्पति चकत्ता के घराने की ॥४७॥

शब्दार्थ—डाढ़ी के रखैयन=डाढी रखने वाले, मुसल्मान। डाढ़ी=जली। बिन चोटी के=बिना चोटी वाले,मुसल्मानों के। खोटी=भ्रष्ट, खराब।

अर्थ—भूषन कवि कहते हैं कि ज्यों २ हिन्दुराज्य की प्रतिष्ठा की हद बढ़ती जाती है त्यों २ उसे देखकर मुसल्मानों की छातियाँ जलती रहती हैं (अथवा हिन्दुराज्य की प्रतिष्ठा, यश, और सीमा को बढ़ता देखकर मुसल्मानों की छातियाँ जलती रहती हैं)। हिन्दु-प्रजा की समस्त कसक (पीड़ा) दूर होगई और मुसल्मानों की ठसक (शेख़ी) मारी गई। वीरवर शिवाजी के आतंक को सुनकर दिल्लीश्वर औरङ्ग़ज़ेब का दिल धड़कता रहता है। रणचण्डी (कालिका) मुसल्मानों के सिर खा खा कर मोटी होगई और मुगल राज-वंश की सम्पत्ति (लक्ष्मी) दिन पर दिन भ्रष्ट होती जाती है।

अलंकार—*अनुप्रास। पाठक! देखिए कितना सुन्दर अनुप्रास है।*

मूल—जिन फन फुतकार उड़त पहार भार,
कूरम कठिन जनु कमल बिदलिगो।
बिषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन,
झारन चिकारि मद दिग्गज उगलिगो॥

कीन्हों जिन पान पयपान सो जहान सब,
कोलहू उछलि जल सिंधु खलभलिगो।
खग्ग खगराज महाराज सिवराज जू को,
अखिल भुजंग दल-मुगल निगलिगो ॥४८॥

शब्दार्थ—विदलि=विदलित, कुचल गया। झारन=फटकारें, लपटें। पय=दूध।

अर्थ—जिसके फन की फुसकार से बड़े २ पहाड़ उड़ जाते थे, जिसके भार से (पृथ्वी को धारण करने वाला) कठोर कच्छप कमल की भाँति दलित हो गया था (टुकड़े २ हो गया था)। जिसके विष समूह में ज्वालामुखी पहाड़ लुप्त हो जाते थे, जिसके विष की लपटों की फटकारों से दिग्गज चिंघाड़ २ कर मद उगलते थे, जिसने समस्त संसार को दुग्ध-पान की भाँति पीलियाँ था, और जिसके प्रताप के मारे (पाताललोक वासी) वराह के उछलने पर समुद्र का पानी खलबला गया उसी समस्त मुगल-सेना रूप महाभयंकर सर्प को महाराज शिवाजी का खड्ग रूपी खगराज (गरुड़) सहज ही में निगल गया।

अलंकार—अतिशयोक्ति गर्भित रूपक। यहाँ मुगल सेना रूप भुजंग की फुंकार से पहाड़ उड़वाना, कमठ औ-दिग्गजों का पीड़ित कराना और संसार को दुग्ध के समान पान कराना आदि अतिशय वर्णन है। यही आतिशयोक्ति का भाव है। पुनः मुग़लसेना रूप भुजंग के लिये शिवाजी के खग्ग में

खगराज (गरुड़) का आरोप किया है। अतः अतिशयोक्ति गर्भित रूपक है।

मूल—राखी हिंदुवानी हिंदुवान को तिलक राख्यो,
अस्मृति पुरान राखे बेद विधि सुनी मैं।
राखी रजपूती रजधानी राखी राजन की,
धरा मैं धरम राख्यो राख्यो गुन गुनी मैं॥
भूषन* सुकवि जीति हद्द मरहट्टन की,
देस देस कीरति बखानी तव सुनी मैं॥
साहि के सपूत सिवराज समसेर तेरी,
दिल्ली दल दाबि कै दिवाल राखी दुनी मैं॥४९॥

शब्दार्थ—दिवाल=हद्द, मर्यादा, धर्म। दुनी=दुनियाँ, संसार।

अर्थ—श्रेष्ठ कवि भूषण कहते हैं कि हे शाहजी के सुपुत्र महाराजा शिवाजी! आपकी तलवार ने हिन्दुओं के हिन्दुत्व, तिलक, पुराण, स्मृति और वैदिक धर्म की मर्यादा की रक्षा की है; और राजपूतों की रजपूती (क्षत्रियत्व), राजाओं की राजधानियाँ, पृथ्वी पर धर्म तथा गुणियों में गुण रक्खा है। मरहट्ठों के सीमाओं को विजय करने की कीर्ति का देश २ में यशगान हो रहा है। आपकी तलवार ने ही दिल्ली की सेना को पराजित करके संसार में धर्म की मर्यादा स्थापित की है।

---

*कोई कोई इस छन्द को 'मतिराम' कृत मानते हैं "कहै मतिराम" इत्यादि परन्तु उनका शिवाजी के दरबार में जाना कहीं नहीं मिलता। यह छंद भूषणजी का ही जान पड़ता है।

अलङ्कार—'पदार्थावृति दीपक' अलंकार। यहाँ 'राखी' पद तथा उसी एक (क्रिया) अर्थ की कई बार आवृत्ति हुई है।

मूल—सारस से सूबा करबानक से साहजादे,
मोर से मुगल मीर धीर मैं धचैं नहीं।
बगुला से बंगस बलूचियौ बतक ऐसे,
काबुली कुलंग याते रन में रचैं नहीं॥
'भूषन' जू खेलत सितारे मैं सिकार सिवा*,
साहि को सुवन जाते दुवन सँचै नहीं।
बाजी सब बाज से चपेटैं चंगु चहूँ ओर,
तीतर तुरुक दिल्ली भीतर बचैं नहीं॥५०॥

शब्दार्थ—करबानक=गौरैया पक्षी। धचैं=धरैं। रचैं=रचते, अनुरक्त होते, करते। सँचै=संचार करते। चंगु=चंगुल, पंजे।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि शाहजी के पुत्र शिवाजी सितारे में शिकार खेल रहे हैं। मुसलमान सूबेदार सारस के समान हैं, शाहजादे गोरैया पक्षी हैं, मुगल अमीर मोर हैं ये भय से घबड़ाए रहते हैं धीरज नहीं धरते। बंगस बगुले हैं, बलूची बतक हैं, काबली कुलंग पक्षी हैं ये भी डरपोक होने के कारण युद्ध में नहीं ठहरते। किसी ओर भी कोई दुष्ट शत्रु

---

*इस स्थान पर "संभा सिवा को सुवन जाते दुवन सचैं नहीं" यह भी पाठ है। इस पाठ के मान ने पर यह छन्द शिवाजी के पुत्र संभाजी की प्रशंसा का हो जाता है। मिश्र-बन्धु सम्पादित प्रति में इस पाठ का कवित्त स्फुट काव्य में दिया है।

पक्षी घूमता दिखाई नहीं देता। शिवाजी के समस्त घोड़े बाज के समान चारों ओर को अपने चंगुल में (मुसल्मान रूपी) पक्षियों को झपटते हैं। उनके सामने मुसल्मान रूपी तीतर दिल्ली के भीतर भी नहीं बचने पाते।

अलंकार—*उपमा और रूपक। उपमा, यहाँ प्रत्येक चरण में 'स' वाचक शब्दद्वारा स्पष्ट है। शिवाजी के बाजी (घोड़) में बाज का आरोप है और तुरकों में तीतर का आरोप है। यही रूपक कहै।*

मूल—बेद राखे बिदित पुरान राखे सारयुत,
राम नाम राख्यो अति रसना सुघर मैं।
हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की,
काँधे मैं जनेऊ राख्यो, माला राखी गर मैं॥
मीड़ि राखे मुगल मरोरि राखे पातसाह,
बैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर में।
राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज,
देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर मैं॥५१॥

शब्दार्थ—रसना=जिह्वा। रोटी=जीविका। गर=गला।

अर्थ—महाराज शिवाजी ने अपनी तलवार के बल से वेदों को प्रकट ही रखा (लुप्त नहीं होने दिया), पुराणों में सार और हिन्दुओं की सुन्दर जिह्वाओं में (पवित्र) राम नाम रहने दिया (अन्यथा मुसल्मान उन्हें नष्ट कर देते)। हिन्दुओं की चोटी, सिपाहियों की जीविका, कंधो पर जनेऊ और गले में

माला सुरक्षित रखी। मुगलों का मर्दन कर, बादशाहों का अभिमान चूर कर, और शत्रुओं को ध्वस्त कर शिवाजी ने अपने हाथों में मनवाञ्छित वरदान देने का अधिकार रखा। उन्हों ने अपने तलवार के ज़ोर से राजाओं के राज्य की सीमा, मन्दिरों में देवता और घर में अपना धर्म सुरक्षित रखा।

अलंकार—*पदार्थावृत्ति दीपक। यहाँ भी 'रखो' की उसी (क्रिया) अर्थमें कई बार आवृति हुई है अतः पदार्थावृति दीपक है।*

मूल—सपत नगेस आठों* कुकुभ-गजेस कोल,
कच्छप दिनेस धरे धरनी अखंड को।
पापी घालै धरम सुपथ चालै मारतंड,
करतार प्रन पालै प्रानिनि के चंड को॥
'भूषन' भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी,
म्लेच्छनि को मारै करि कीरति घमंड को।
जग काज वारे निहिचिंत करि डारे सब,
भोर देत आसिष तिहारे भुजदंड को॥५२॥

शब्दार्थ—नगेस=पहाड़। ककुभ=दिशा। ककुभ गजेश=दिग्गज। करतार प्रन=धर्म स्थापन के हेतु अवतार लेने की प्रतिज्ञा। चंड=बल, शक्ति।

अर्थ—भूषण कवि कहते हैं कि हे धर्म वीर महाराज शिवाजी!

---

*'आठों कुकुभ-गजेस' के स्थान पर 'चारों कुकुभ-गजेस' भी है किन्तु 'चारों' के स्थान पर 'आठों' पाठ ही अधिक उचित ज्ञात होता है।

आपने म्लेच्छों को मार कर कीर्ति व मान पाया है। पापियों का नाश कर धर्म के श्रेष्ठ मार्ग पर सूर्य को चलाया है ईश्वर की प्रतिज्ञा का पालन कर (धर्म की स्थापना कर और पाप का नाशकर) प्राणियों की शक्ति का पोषण किया है। इसी हेतु सातों पर्वत, आठों दिग्गज, पाताल वासी वराह, कच्छप, सूर्य, पृथ्वी को धारण करने वाले शेषजी और सर्व भाँति निश्चिंत हुई साधारण काम काजी दुनियाँ आदि ये सब नित्य प्रातः काल आप के बाहु-युग्म को आशीर्वाद देते हैं।

अलंकार—उदात्त। यहाँ—शिवाजी के भुजदंड के वैभव का वर्णन है।

समाप्त

हिन्दुस्तान टाइम्स, प्रेस
दिल्ली ।